1084 वें की माँ

महाश्वेता देवी

1084वें की माँ

1084वें की माँ

महाश्वेता देवी

हिन्दी रूपान्तर
सांत्वना निगम

राधाकृष्ण

प्रथम हिन्दी संस्करण : 1979

मूल्य
14 रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2 अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
भारती प्रिंटर्स
दिल्ली-110032

स्वर्गीय अवलोकितेश
को स्मृति में

क्रम

□ सुबह □

बाईस साल पहले की एक सुबह सपने में सुजाता वहीं लौट गयी थी। अक्सर ही ऐसा होता है; कितनी बार ऐसे ही लौट जाती है, अपने-आप ही बैग में सामान समेटती है—तौलिया, साड़ी, टूथब्रश, साबुन। अब सुजाता की उम्र है त्रेपन। सपने में वह बत्तीस वर्ष की सुजाता को देखती है जो बैग समेटने में व्यस्त है। गर्भ के भार से ढीला शरीर, लेकिन तरुणी सुजाता अपने बेटे व्रती को इस दुनिया में लाने की तैयारी में व्यस्त है। एक-एक चीज़ उठाकर बैग में रखती है। उस सुजाता का चेहरा बार-बार दर्द से पीला पड़ रहा है; दाँतों से होठों को दबाकर रुलाई रोकती है सुजाता—सपने की सुजाता। व्रती जो आ रहा है!

उस दिन भी रात आठ बजे से ही दर्द उठना शुरू हो गया था। हेम अनुभवी प्रौढ़ा की तरह बोली थी: 'पेट नाभि के नीचे उतर आया है, माँ जी, अब ज्यादा देर नहीं है।' हेम ने ही उसका हाथ पकड़कर कहा था: 'ठीक-ठाक दोनों दो शरीर होकर लौट आना।'

दर्द भयंकर होता जा रहा था। बच्चा कभी भी जन्म ले सकता है, जानकर ही सुजाता पहले से ही नर्सिंग होम में दाखिल हो गयी थी। ज्योति तब दस का था, नीपा आठ और तुली छः की। उसे याद है, सास तब उसके

पास ही रह रही थीं। ज्योति के बाबूजी सासजी के इकलौते पुत्र थे। एक बच्चे के जन्म के बाद ही सास विधवा हो गयी थीं। सुजाता का बार-बार माँ बनना उनको सुहाता न था—जाने कैसी द्वेष-भरी आँखों से वह उसे देखती थीं! बच्चा होने के ठीक पहले अपनी बहन के घर चली जाती थीं, सुजाता को मँझधार में छोड़कर।

सुजाता के पति कहते थे : 'माँ का मन बहुत नरम है, समझी? उनसे यह सब देखा नहीं जाता—यह दर्द-वर्द, चीखना-चिल्लाना, और क्या!' लेकिन सुजाता शायद ही कभी चीखी-चिल्लायी हो। दाँत भींच कर बच्चों का बंदोबस्त भी करती। उस बार सासजी यहीं थीं, क्योंकि उनकी बहन यहाँ नहीं थी, और ज्योति के बाबूजी काम से कानपुर गये थे। उसे सब-कुछ याद है। दिव्यनाथ को पता नहीं था कि उनकी माँ इस बार यहीं रहेंगी। वह नहीं रहेंगी, यह सोचकर भी दिव्यनाथ ने सुजाता का कोई बंदोबस्त नहीं किया, हर बार की तरह। बाथरूम में जाकर खून देखकर सुजाता घबरा गयी थी; फिर सब-कुछ ठीक-ठाक करके रसोइये से कहकर टैक्सी बुलवा ली थी।

नर्सिंग होम में चली गयी थी सुजाता। डॉक्टर का चेहरा उसको देखकर चिंता-ग्रस्त हो गया था। सुजाता डर गयी थी। दर्द से आँखें बार-बार धुंधला जाती थीं—जैसे किसी ने आँखों पर घिसे काँच का टुकड़ा रख दिया हो, फिर भी ज़बरदस्ती आँखें खोले रखकर डॉक्टर की तरफ़ देख कर उसने पूछा था : 'ऐम आई ऑल राइट?'[1]

'ज़रूर! आप सो जाइये।'

'आप क्या करेंगे?'

'ऑपरेशन।'

'डॉक्टर साहब, चाइल्ड[2]?'

'आप सोइये न! मैं जो हूँ। अकेली क्यों आयीं?'

'वह नहीं हैं।'

---

1. मेरी सेहत तो ठीक है न? 2. बच्चे का क्या होगा?

कहकर ही सुजाता हैरान रह गयी थी। उसे तो यही उम्मीद थी कि कलकत्ता में रहने पर भी दिव्यनाथ उसके साथ नहीं आयेंगे। फिर डॉक्टर साहब को क्यों उम्मीद हुई? दिव्यनाथ कभी साथ नहीं आते; सुजाता को अस्पताल नहीं ले जाते; बच्चे का रोना सुनना पड़ेगा—इससे तिमंजिले पर ही सोते रहते। बच्चे बीमार पड़ें तो खबर तक नहीं लेते, लेकिन हाँ, दिव्यनाथ की नज़रें सुजाता पर ज़रूर लगी रहतीं; ध्यान से सुजाता को देखते कि सुजाता का शरीर फिर से माँ बनने योग्य हो रहा है या नहीं!

'टॉनिक खा रही हो न?'

कैसी गाढ़ी थरथराती आवाज़ में दिव्यनाथ उससे पूछते हैं। कूट-कूट कर वासना के उभर आने पर उनकी आवाज़ जाने कैसे लिजलिजाती है! सुजाता पहचानती है इस दिव्यनाथ को। उनकी सेहत की खबर लेने का एक ही मतलब होता है दिव्यनाथ का; डॉक्टर को क्या मालूम?

डॉक्टर सुजाता को दवा देते हैं। दवा से दर्द कम नहीं हुआ। अचानक उसी समय एक अजन्मी संतान के लिए भावभीनी ममता से सुजाता का मन भर आया था। तुली होने के बाद क़रीब छः साल गुज़र गये थे—बड़ी मुश्किल से अपने को सुजाता ने बचा कर रखा था, लेकिन आखिर हार माननी पड़ी थी।

नौ महीने तक शायद इसीलिए अपने-आप को जाने कितनी अश्लील और अपवित्र मानती रही थी वह! शरीर के बढ़ते हुए भार को लगातार कोसती रही थी, लेकिन जैसे ही पता लगा कि बच्चे का जीवन संकट में है, तभी मन ममता से छटपटा उठा था। सुजाता ने डॉक्टर को बुलाया था, कहा था: 'ऑपरेशन कीजिये, बचाइये उसको।'

'वही तो कर रहा हूँ।'

डॉक्टर के निर्देश से नर्स इंजेक्शन देती है। सुजाता के पेड़ू को चीरता

हुआ दर्द अंदर-बाहर हो रहा था। सन उन्नीस सौ अड़तालीस की सोलह जनवरी। सुजाता बार-बार बिस्तर की चादर को मुट्ठी में भींच लेती थी। माथा पसीने से भीग गया था। आँखों के नीचे के स्याह घेरे फैलते जा रहे थे। ज़रा भी सर्दी नहीं लग रही थी, हालाँकि उस साल जनवरी में कड़ी ठंड पड़ी थी।

पेड़ू को चीरता हुआ दर्द बाहर निकल रहा है और फिर अंदर समाता जा रहा है। बिस्तर की सफ़ेद चादर को मुट्ठी में भींचे, पसीने से लथपथ सुजाता जाग जाती है। ज्योति के बाबूजी को देखकर उसके गोरे माथे की लम्बी-लम्बी भौंहें सिकुड़ जाती हैं। ज्योति के बाबूजी पास के पलंग पर क्यों हैं? फिर अपने-आप ही सिर हिलाती है। व्रती के होने के दिन दिव्यनाथ पास नहीं थे न, इसलिए सपने में वह कभी दिव्यनाथ को नहीं देखती। लेकिन अब तो वह सपना नहीं देख रही है न?

किसी तरह हाथ बढ़ाया। वैलारगन[1] की टिकिया और पानी। टिकिया मुँह में डाली, पानी से निगली। आँचल से माथा पोंछ लिया; फिर से लेट गयी। अब सबसे ज़रूरी काम है—एक से सौ तक गिनना! डॉक्टर ने यही कहा है। गिनती करने से ही दर्द का अहसास कम होता जाता है। जितना समय गिनने में लगता है, उतने में ही वैलारगन अपना काम शुरू कर देती है। दर्द कम हो जाता है।

फिर, सचमुच ही दर्द कम हो जाता है। अभी कम हो रहा है—कम होना बहुत ज़रूरी है। घड़ी की तरफ़ देखती है; छः बजे हैं। दीवार पर नज़र दौड़ायी। कैलेंडर। सत्रह जनवरी। सोलह जनवरी की सारी रात दर्द रहा था—होश और बेहोशी के बीच झूलते हुए—ईथर की तेज़ गंध, रोशनी की चौंध, दर्द के बोझिल और धुंधले पर्दे के उस पार डॉक्टरों की चहल-पहल—सारी रात। सत्रह जनवरी भोर के धुंधलके में व्रती आ पहुँचा था। आज वही सत्रह जनवरी है। और आज ही के दिन, दो साल पहले ऐसे ही इस

---

1. असहनीय दर्द को कम करने के लिए ली जाने वाली दवा।

आदमी के पास के पलंग पर सो रही थी सुजाता। भोर के धुँधलके में टेली-फ़ोन की घंटी वज उठी थी, पास पड़ी मेज़ से। अचानक ही।

टेलीफ़ोन की घंटी वज रही है, ज्योति के कमरे में दो साल पहले। उस दिन के वाद से ही ज्योति टेलीफ़ोन अपने कमरे में ले गया था। समझदार, वहुत समझदार है ज्योति। उनकी पहली संतान—दिव्यनाथ का आज्ञाकारी वेटा, विनी का सहृदय पति, सुमन का स्नेहल पिता।

समझदार ज्योति ! दो साल पहले सुजाता ने इक्यावनवाँ साल पूरा किया था, ज्योति के पिता ने छप्पनवाँ। सम्पन्न स्थिति, सजा-सँवरा जीवन दोनों का। लड़की की शादी हो गयी; छोटी लड़की ने भी अपने मन का लड़का ढूंढ़ लिया है। वड़ा वेटा सुप्रतिष्ठित। छोटे वेटे को वावूजी कॉलेज के वाद ही इंगलैंड भेजेंगे—सव-कुछ सधा हुआ, सँवरा हुआ, तरतीव से सजाया हुआ। सुंदर, वहुत सुंदर था सव-कुछ !

उसी समय, उम्र के उन्हीं सजे-सँवरे दिनों में, टेलीफ़ोन की घंटी वजी थी। माँ ने नींद-भरी आँखों से टेलीफ़ोन का रिसीवर उठाया था। अचानक एक अनजान, ठंडी, मशीनी अफ़सरी स्वर ने पूछा था: 'व्रती चैटर्जी आप का कौन लगता है ? वेटा ? काँटापुकूर चले आइये !'

हाँ, उस, रक्त-मांस और आकार-हीन स्वर ने कहा था: 'काँटापुकूर चले आइये।' रिसीवर हाथ से छिटककर गिर पड़ा था। सुजाता नीचे गिर गयी थी; दाँत भिंच गये थे।

दो साल पहले, सत्रह जनवरी की सुबह, व्रती के जन्मदिन के दिन—व्रती के धरती पर आने के समय ही—इस साफ़-सुथरे, सजे-सजाये घर में, इस सुन्दर परिवार में, टेलीफ़ोन की ख़वर ही की तरह एक अहेतुक, वेहिसाव, वेतरतीव घटना घटी थी।

इसीलिए ज्योति टेलीफ़ोन हटा ले गया था। सुजाता को इस सबका कुछ भी पता नहीं था। तीन महीने तक वह सब चीज़ों से बेख़बर थी। बिस्तर पर पड़ी रहती थी—आँखों को बाँहों से ढँके। कभी ज़ोर से नहीं रोयी। हेम, सिर्फ़ हेम उसके आस-पास रहती थी, हाथ थामे रहती थी, नींद की गोलियाँ देती थी। इसीलिए सुजाता को पता ही नहीं लगा कि कब टेलीफ़ोन हटा लिया गया।

तीन महीने बाद सुजाता ने फिर से बैंक जाना शुरू किया। फिर से ज्योति, नीपा, तुली से सहज होकर बोलने लगी। ज्योति के बेटे की पेंसिल बना दी; बिनी से पूछा : 'मेरी काली किनारे वाली साड़ी क्या धुलने गयी है ?' ज्योति के बाबूजी जब बम्बई जाने लगे तो उनके सूटकेस में ईसबगोल का पैकेट रखा। और ऐसे ही जब सब-कुछ सहज स्वाभाविक हो गया, तभी सुजाता का ध्यान उधर गया कि टेलीफ़ोन को उसके कमरे से हटाकर ज्योति के कमरे में रख दिया गया है।

यह देखते ही उसके माथे पर बल पड़ गये थे। ज्योति इतना बेवकूफ़ है ? उसकी बेवकूफ़ी पर उसको तरस आया था। अब तो कोई फ़ोन नहीं आयेगा ! ज्योति के बाबूजी का चार्टर्ड एकाउंटेंसी का अपना दफ़्तर है। ज्योति अँग्रेज़ी फ़र्म में छोटा अफ़सर है। नीपा, बड़ी लड़की, का पति कस्टम्स में बड़ा अफ़सर है। तुली ने जिससे शादी तय की है उसी टोनी कपाड़िया ने अपनी एजेंसी खोली है स्वीडन में, भारतीय रेशमी बाटिक, क़ालीन, पीतल के नटराज और बाँकुड़ा के टेराकोटा के घोड़े एक्सपोर्ट करता है। ज्योति के सास-ससुर विलायत में ही रहते हैं।

ये लोग ऐसा कोई भी जोखिम-भरा ख़तरनाक काम नहीं करेंगे जिसके लिए अचानक टेलीफ़ोन आ पहुँचेगा, और सुजाता को अचानक मार्ग में गिरते-पड़ते काँटापुकूर जाना पड़ेगा !

ये लोग कोई भी ऐसी कोई बेवकूफ़ी नहीं करेंगे जिसकी वजह से ज्योति और उसके बाबूजी को दौड़-धूप करनी पड़ेगी ऊपर के अफ़सरों के स्तर पर, और काँटापुकूर जाना होगा सिर्फ़ सुजाता और तुली को।

ये लोग ऐसा कोई भी अपराध नहीं करेंगे जिससे काँटापुकूर में चित होकर पड़े रहना पड़ेगा। एक भारी चादर हटा देगा डोम, और ओ० सी०[1] पूछेगा : 'डु यू आइडेंटिफ़ाई यूअर सन ?'[2]

ये सब समझदार हैं ! नियम, उप-नियम मानकर चलते हैं; भले नागरिक हैं। ये लोग सुजाता को मुसीबत में नहीं डालेंगे। ज्योति के पिता को दौड़-धूप करने के लिए विवश नहीं करेंगे। सच तो यह है कि उनका बेटा ऐसी कलंकित मौत मरा है, इस ख़बर को दबाने के लिए ही ज्योति के बाबूजी जाने कहाँ-कहाँ सिफ़ारिश का तुक्का भिड़ाते फिर रहे थे।

फ़ोन पर ख़बर सुनते ही ज्योति के बाबूजी के मन में पहली बात यही उठी थी कि कैसे इस ख़बर को दबा दिया जाये; उससे पहले काँटापुकूर जाना ज़्यादा ज़रूरी है, चाहे एक बार के लिए ही—यह ख़याल ही मन में नहीं आया। ज्योति भी बाप का आदर्श बेटा है; वह भी बाप के साथ निकल पड़ा था।

सुजाता को घर की कार तक ले जाने की अनुमति नहीं दी थी दिव्यनाथ ने। काँटापुकूर में उनकी गाड़ी खड़ी रहेगी ? यह कैसे हो सकता है ?अगर कोई देख ले तो !

उस दिन व्रती के साथ-साथ सुजाता की चेतना में व्रती के बाबूजी भी मर गये ! व्रती के बाबूजी के उस दिन के बरताव से उसकी पूरी चेतना पर वज्रपात हुआ था; सब-कुछ हिल गया था, झरझरा कर टूट के बिखर गया था सब। जैसे करोड़ों साल पहले इस आदिम धरती पर विस्फोट हुआ था और उस विस्फोट से पृथ्वी पर के महादेश छिटककर नक़्शे के दूर-दूर के छोरों पर बिखर गये थे—बीच की सपाट दूरी को समुद्र ने पाट दिया था !

---

1. आफ़िसर कमांडिंग।
2. क्या अपने बेटे की शिनाख़्त कर पा रही हैं आप ?

दिव्यनाथ को पता भी नहीं लगा कि सुजाता के लिए वह मर चुके थे और आखिरकार धीरे-धीरे वह दूर, और भी दूर, होते गये थे। सुजाता के पास ही लेटे रहते हैं, लेकिन जान नहीं पाते कि मृत व्रती से ज़्यादा उन्होंने जीवित दिव्यनाथ के मान-सम्मान, सुरक्षा की चिंता की थी, इसीलिए सुजाता के लिए वह अपना अस्तित्व खो चुके हैं।

दिव्यनाथ की दौड़-धूप सफल हुई थी। सिफ़ारिश का तुक्का भिड़ गया था। दूसरे दिन अखबार में सिर्फ़ चार लड़कों की हत्या की खबर निकली थी; नाम भी निकले थे उनके। व्रती का नाम कहीं नहीं था!

इस तरह व्रती को मिटा दिया था दिव्यनाथ ने। लेकिन सुजाता ऐसा नहीं कर पायी।

वैसी लीकपंथी व अप्रत्याशित घटना और कभी भी नहीं घटित होगी, यह जानते हुए भी ज्योति टेलीफ़ोन उठाकर ले गया है! सुजाता को अजीब-सी हँसी आयी।

विनी ने उसके होठों पर कौतुकभरी मुसकान देखी, और उसके मन को धक्का लगा। वह झरझरा कर रो पड़ी। ज्योति से कहा: 'शी हैज़ नो हार्ट।'[1] बात सुजाता को सुनाकर कही गयी थी। सुजाता ने सुन-भर लिया, लेकिन मन पर नहीं लगाया। उसको पहले भी लगा था, बार-बार लगता था कि विनी सचमुच व्रती को प्यार करती थी।

तब ऐसा ही लगा था कि विनी व्रती को प्यार करती थी, पर बाद में ऐसा नहीं लगा था—क्योंकि बरामदे में व्रती की फ़ोटो नहीं थी, उसके जूते भी नहीं दिखायी दिये थे, व्रती की बरसाती भी ग़ायब थी।

'विनी, वह तसवीर कहाँ गयी?'

'तिमंज़िले के कमरे में।'

'तिमंज़िले के कमरे में?'

'बाबूजी ने कहा था...।'

---

1. उसके तो दिल नहीं, पत्थर है।

'बाबूजी ने कहा था...?'

व्रती के चले जाने के बाद भी, उसे मिटाकर और उसके प्रत्येक अवशिष्ट चिह्न को मलियामेट कर देने की कोई कोशिश दिव्यनाथ ने नहीं छोड़ी थी! कोई नया दुःख भी नहीं हुआ था। यह देखकर सिर्फ़ अवसन्न बोझिल मन से सोचा था: 'हाँ, दिव्यनाथ ही कह सकते हैं ऐसी बात, लेकिन विनी 'नहीं' कहकर क्या रोक नहीं सकती थी ?'

सुजाता एक शब्द भी बिना बोले बैंक चली गयी। बैंक की नौकरी बहुत पुरानी है। व्रती तीन साल का था तब वह इस नौकरी पर पहली बार गयी थी। व्रती के बाबूजी के दफ़्तर में तब गड़बड़ चल रही थी। दो बड़े-बड़े एकाउंट हाथ से निकल गये थे।

उसी समय काम पर गयी थी सुजाता। घर में सबने उसे उत्साहित किया था, यहाँ तक कि सास ने भी कहा था: 'काम करना ही चाहिए। तुम थीं कि इतने दिन घर बैठी रहीं और दिबू भी तो ऐसा नहीं है, नहीं तो तुम्हें पहले ही नौकरी करने न भेजता ?'

सुजाता क्यों नौकरी करना चाह रही है, क्यों खुद ही जोड़-तोड़ लगा रही है—यह पता लगाना किसी ने ज़रूरी नहीं समझा। ऐसी कोई बड़ी बात भी है—यह भी नहीं सोचा किसी ने। अच्छा ही हुआ था। इस घर में दिव्यनाथ और उनकी माँ ही सबका ध्यान अपनी ओर खींचे रखते थे। सुजाता का अस्तित्व छाया की तरह हो गया था—अनुगता का, अनुगामिनी का नीरव, स्वत्वहीन अस्तित्व !

बैंक में जान-पहचान थी, नहीं तो शायद काम न मिलता। सुजाता को नौकरी मिली थी परिवार और वंश के परिचय से। अभिजात चेहरे वाली लॉरेटो की बी० ए०-पास औरतें तो और भी कितनी थीं—यह क्या सुजाता को पता नहीं था ?

सिर्फ़ व्रती रोता था।

सपने में अब भी तीन साल का व्रती उसके घुटनों से लिपटकर रोता है; कितनी बार, रोकर कहता है : 'माँ, आज, सिर्फ़ आज तुम दफ़्तर मत जाओ, मेरे पास रहो।'

गोरा, दुबला, व्रती—रेशम की तरह मुलायम बाल, आँखों में भरी ममता।

वही व्रती। मुक्ति-दशक[1] में एक हज़ार तिरासी जनों के बाद चौरासी नंबर पर उसका नाम है। अगर कोई इस दशक के ढाई सालों में हत्या किये गये लड़कों के नामों की सूची बनाये तो क्या उसको व्रती का नाम कहीं मिलेगा? अख़बारों को छान मारने पर भी तो वह व्रती को नहीं जान पायेगा!

व्रती के बाबूजी ने उसका नाम अख़बार में भी नहीं आने दिया।

'व्रती की कौन लगती हैं?'

'नहीं, चेहरा देखने की ज़रूरत नहीं।'

'कोई आइडेंटिफ़िकेशन मार्क?'[2]

'गरदन पर लहसुन है।'

'नहीं, चेहरा देखने की ज़रूरत नहीं।'

उसने क्या जवाब दिया था? 'मैं देखूँगी!' नीली कमीज़, उँगलियाँ, बाल—सब-कुछ देख लेने पर भी मन में संशय बना हुआ था। कहीं पर तर्क-बुद्धि, आँखों-देखी चीज़ को भी अनदेखा करके मन का संशय कह रहा था कि नहीं, शायद मुँह देखने पर पता लगे कि यह व्रती नहीं है। क्या ऐसा ही कहा था उसने?

पास बैठा डोम असीम करुणा से बोला था: 'क्या देखोगी माँजी, मुँह का कुछ बचा है क्या?'

---

1. उग्रवादी वामपंथियों द्वारा मई 1970 ई. चलाया गया आन्दोलन।
2. पहचान के लिए शरीर पर कोई निशान?

तब क्या किया था सुजाता ने ? और भी चार लाशें पड़ी थीं। पता नहीं, कौन लोग विह्वल स्वर से रो रहे थे ! जाने कौन ज़मीन पर सर पटक रहा था ! किसी का भी चेहरा याद नहीं आता। सब-कुछ धुंधला-धुंधला, लेकिन कोई-कोई स्मृति हीरे की छुरी की तरह चमकीली, धारदार पैनी होती हैं—अपनी रोशनी से ही काटने वाली !

उसकी छाती, पेट और गरदन पर गोलियों के तीन निशान थे। नीले गड्ढे ! बहुत पास से दागी हुई गोलियाँ, नीली चमड़ी कोरडाइट[1] की झुलसन से भुनी हुई। बादामी खून के गड्ढों के चारों तरफ़ बारूद की झुलसन से बना खोखला चकत्ता, कटी-फटी चमड़ी। गरदन, पेट और छाती में तीन गोलियाँ !

व्रती का चेहरा। व्रती का चेहरा ! सुजाता ने पूरा ज़ोर लगाकर दोनों हाथों से चादर हटा दी। व्रती का चेहरा ! किसी तेज़ और भारी औज़ार के पिछले हिस्से से मार-मारकर कुचला हुआ व्रती का चेहरा ! पीछे से तुली की चीख।

वही चेहरा देखती है सुजाता झुककर ! उँगलियाँ फेरे ? 'व्रती ! व्रती !' उसे पुकारकर चेहरे पर उँगलियाँ फेरे ? लेकिन उँगलियों के स्पर्श के लिए एक इंच चमड़ी भी नहीं बची थी। सब कुचला हुआ मांस-पिंड ! उसके बाद ही सुजाता चेहरा ढक देती है। पीछे मुड़ती है। अंधे की तरह तुली से लिपट जाती है।

व्रती के बाबूजी ने फ़ोटो हटा लेने के लिए कहा है। बैंक जाते समय भी यह बात याद थी—उस घटना के बाद जब पहले दिन बैंक गयी थी...।

बैंक में सभी उसको ताक रहे थे। अचानक सब आवाज़ें खामोश हो गयी थीं। फिर एक चुप्पी !

एजेन्ट लूथरा आगे आया था।

'मैडम, सो सॉरी...।'

---

1. गन-कॉटन, नाइट्रोग्लिसरीन और एक खनिज जेल्ली से बना हुआ सांघातिक विस्फोटक।

'थैंक यू,' सुजाता ने झुका हुआ चेहरा ऊपर नहीं उठाया था।

'मेमसाब !'

'एक गिलास पानी,' भीखन ने गिलास आगे कर दिया था। सुजाता की पुरानी आदत है। दफ़्तर आते ही एक गिलास पानी पीती है।

'मेमसाब !'

भीखन ने धीरे से कहा था। सुजाता ने उसकी आँखों का दर्द पढ़ लिया था। भीखन जैसे उन्हीं दर्द-भरी आँखों से उससे लिपट गया था जैसे एक दिन सुजाता उससे लिपट गयी थी जब भीखन के लिए बैंक में तार आया कि उसका लड़का बीमारी से मर गया है।

भीखन पर से आँखें हटा ली थीं सुजाता ने। अभी, इसी वक़्त वह उसकी सहानुभूति नहीं ले पा रही है। 'भीखन, तू मुझे माफ़ कर दे, भाई ! व्रती की मौत तेरे बेटे की मौत की तरह तो नहीं है न ! तेरे बेटे की मौत ऐसी थी कि सब-कुछ भूलकर तुझसे लिपटकर दुःख बँटाया जा सकता था।'

लेकिन व्रती उस तरह जो नहीं मरा। व्रती की मृत्यु के पहले बहुत-से प्रश्न हैं और बाद में भी बहुत-से प्रश्न-चिह्नों की भीड़ लग गयी है। क़तारों में चलने वाले प्रश्न-चिह्नों का जुलूस ! और वे सब प्रश्न अनुत्तरित रह गये हैं। एक का भी जवाब मिलने से पहले ही व्रती चैटर्जी की फ़ाइल बंद हो गयी !

'भीखन, तू मुझे माफ़ कर।'

सारा दिन मशीन की तरह काम करती रही। व्रती के बाबूजी से शाम को लौटते ही पूछा था :

'तुमने व्रती की फ़ोटो हटाकर तिमंज़िले में रखने को कहा है ?'

'हाँ।'

'उसके जूते ?'

'हाँ।'

'क्यों ?'

'क्यों !'

दिव्यनाथ ने हैरान होकर सिर हिलाया था।

क्यों व्रती की सब चीज़ें हटा देना ज़रूरी है—क्यों उसके अस्तित्व के, उसकी स्मृति के टुकड़े-टुकड़े कर निशानों तक को मिटा देना ज़रूरी है—यह अगर सुजाता नहीं समझेगी तो कौन उसे समझा सकता है ?

दिव्यनाथ कुछ नहीं बोले थे।

'तिमंज़िले के कमरे में ताला लगा है क्या ?'

'हाँ।'

'चावी किसके पास है ?'

'मेरे पास।'

'दो।'

चावी को लेकर सुजाता उठकर चली गयी थी। तिमंज़िले के कमरे में व्रती सोता था। आठ वर्ष की उम्र से ऐसा ही बंदोबस्त है। पहले-पहल वह अकेला नहीं सोना चाहता था, डरता था। सुजाता ने कहा था : ठीक है, हेम उसके कमरे में ज़मीन पर सो जाया करेगी।

दिव्यनाथ ग़ुस्से से भर जाते थे कि ज्योति, नीपा, तुली—उनके बारे में सुजाता ने कभी कमज़ोरी नही दिखलायी। सुजाता कहती थी कि उन्हें तब भी एतराज़ था क्योंकि वे भी डरते थे, लेकिन तब दिव्यनाथ जो कहते हैं उसके विपरीत कोई करे—ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता था।

डरता था व्रती, बहुत डरता था। बेहद कल्पनाशील बच्चे जैसे डरते हैं। रात को सड़क पर से आती हुई 'रामनाम सत्त है' की आवाज़ से डरता था। दिन में बहुरूपिया जब डाकू बनकर आता था और दहाड़ कर बोलता था, तो भी डरता था। अब व्रती सब डरने-न-डरने के परे है। बचपन से ही मृत्यु की कविता उसको बहुत प्रिय थी। तभी तो कभी-कभी सुजाता के सपने में सात साल का व्रती खिड़की पर पैर लटका के बैठकर कविता पढ़ा करता है। सपने में सुजाता जब व्रती को देखती है तब जैसे दो चेतनाएँ एक साथ बनी रहती हैं। एक मन कहता है—यह तो सपना है, व्रती नहीं है; दूसरा मन कहता है—नहीं, यह सपना नहीं, सच है।

इसीलिए सुजाता के सपने का व्रती खिड़की पर पैर लटकाये बैठे कविता पढ़ता है। सुजाता उसके बिस्तर पर बैठकर सुनती है, सुनती जाती है और उसके बिस्तर की चादर खींचकर ठीक कर देती है, तकिया ठीक से लगा देती है।

कभी वह पढ़ता है :

था डरपोक जो और सभी से ज़्यादा
उसी ने खोला अँधियारे घर का ताला।

कभी सपने में देखती है—हाथ में 'शिशु' नाम की कविता की किताब लिये टहलता हुआ व्रती पढ़ रहा है :

अँधियारे में ही चला गया तू
लौट के आ अँधियारे में चुपके-चुपके
और कोई न देख पायेगा तुझको
बस तारे तेरा मुँह ताकेंगे झुक के।

सोते-सोते चिल्ला पड़ती है उसका नाम लेकर, और नींद टूट जाती है। सपना इतना सच-सा लगता है कि सुजाता चारों ओर नज़र दौड़ाती है और व्रती को खोजती है !

तिमंज़िले के कमरे के सामने ठिठक कर खड़ी हो गयी थी सुजाता। व्रती का बिस्तर लपेटा हुआ है—कपड़े आलमारी में, दीवार पर तसवीर, शेल्फ़ में किताबें। सिर्फ़ सूटकेस नहीं है। उसे पुलिस ले गयी थी। उसके पलंग के बाजू पकड़कर, सुजाता ने भौहें सिकोड़कर सोचने की कोशिश की कि व्रती की हत्या में क्या उसकी भी कोई परोक्ष देन है ? कैसे गढ़ा-बनाया था उसने व्रती को कि इस दशक में, जो मुक्ति का दशक होने चला है, व्रती एक हज़ार चौरासीवीं प्राण-हीन देह हो गया ?हो गया था। फिर, वह क्या कर सकती थी और कर नहीं पायी कि जिससे व्रती एक हज़ार चौरासीवीं लाश हो गया ? उसकी असामर्थ्य का मूल कहाँ था ?

दिव्यनाथ व्रती को सह नहीं पाते थे, कहते थे : 'मदर्स चाइल्ड ![1] तुम्हीं ने उसे मुझसे दुश्मनी करना सिखाया है।' सुजाता हैरान रह जाती थी। वह क्यों व्रती को सिखायेगी बाप से दुश्मनी करना ? आख़िर क्यों ? दिव्यनाथ क्या सुजाता के दुश्मन हैं ? दिव्यनाथ की जिन मूल्यों पर आस्था है—संभ्रांतता, अच्छी आर्थिक अवस्था, सुरक्षा—उसकी भी आस्था इन्हीं पर है। कम-से-कम आस्था है या नहीं—यह प्रश्न उसने अपने से कभी नहीं किया और जब प्रश्न ही नहीं किया तो शायद प्रश्न कभी उठा ही नहीं था।

सुजाता बड़े घर की लड़की है। बेहद रूढ़िवादी परिवार है उसका। लॉरेटो में पढ़ना, बी०ए० पास करना—यह सभी कुछ विवाह के लिए किया गया था। लड़के की हालत ख़ास अच्छी नहीं है—जानते हुए भी, बड़े घर के लड़के दिव्यनाथ के साथ उसकी शादी कर दी गयी।

घर की अच्छी आर्थिक हालत, सुरक्षा—इन सब पर सुजाता की भी आस्था है, इसलिए दिव्यनाथ का आरोप झूठा है। लेकिन अगर यह आरोप झूठा है तब तो सिर्फ़ यही प्रमाणित होता है कि सुजाता ने व्रती को बाप से दुश्मनी ठानने को नहीं उकसाया। यह तो प्रमाणित नहीं होता न कि व्रती बाप को दुश्मन नहीं समझता था। व्रती दिव्यनाथ को सह नहीं पाता था, यह सुजाता को मालूम था। अच्छी तरह पता था।

'क्यों व्रती, ऐसा क्यों ?'

'दिव्यनाथ चैटर्जी एक व्यक्ति या एक इकाई के रूप में मेरे शत्रु नहीं हैं।'

'फिर ?'

'उनका जिन चीज़ों, जिन मूल्यों पर विश्वास है उन्हीं पर और भी कितने लोगों का विश्वास है। इस मूल्य-बोध को जो पाल-पोस रहा है वही

1. अपनी माँ का ही बेटा है।

वर्ग हमारा शत्रु है। वह उसी वर्ग के हैं।'

'जाने क्या-क्या कहता है तू; मुझे समझ नहीं आता कुछ।'

'समझने की कोशिश ही क्यों कर रही हो? बटन लगाओ न!'

'व्रती, तू जाने कैसा होता जा रहा है?'

'मतलब?'

'बदलता जा रहा है।'

'बदलना नहीं चाहिए मुझे?'

'कहाँ घूमता रहता है सारा दिन?'

'बस, गप्पें, तफ़रीह और क्या!'

'किनके साथ?'

'दोस्तों के।'

'ले अपनी कमीज़। बटन लगाना था, बस तभी माँ के साथ बतियाने का थोड़ा-सा समय मिला तुझे।'

व्रती कुछ नहीं बोला था—सिर्फ़ आँखें मिचमिचा कर हँस दिया था। उसके हँसने, बोलने के तरीक़े में जाने क्या चीज़ बार-बार झलकती थी—सहनशीलता, धीरज। जैसे सुजाता के कुछ पूछने से पहले ही वह जानता था कि जवाब उसके समझ में नहीं आयेगा। बात ऐसे करता था उसके साथ जैसे वह बाप हो और सुजाता उसकी छोटी-सी बेटी। उसको समझा-बुझाकर फुसला रहा हो जैसे। सुजाता को महसूस हो रहा था कि धीरे-धीरे व्रती अजनबी बनता जा रहा है, उसकी पहचान से परे होता जा रहा है। तब मन दुखी हो जाता था, लेकिन किसी भी तरह की कोई आशंका मन में नहीं जागी थी, डर भी नहीं लगा था।

क्यों उसे यह अहसास नहीं हुआ था कि जब बेटा धीरे-धीरे माँ की पहचान के परे होता जाता है, एक घर में रहते हुए भी जुड़े रहने के सब सूत्र टूट जाते हैं तो किसी भी दिन भयंकर विपदा आ सकती है?

व्रती के कमरे में खड़ी हो सुजाता भौंहें सिकोड़ कर यह सब सोचती रही थी, सोचती रही थी।

व्रती अगर सुजाता के भैया की तरह कठिन बीमारी भुगतकर मरता तो मरने के बाद कुछ प्रश्न रह जाते मन में। शायद वे प्रश्न होते—डॉक्टर से कोई भूल हुई, या हम से ? इस डॉक्टर को न बुलाकर अगर किसी और को दिखाते, तो कैसा रहता ? यह दवा न देकर कोई और दवा देते तो ? बीमारी भुगतकर हुई मौत के बाद ऐसे ही सवाल उठते हैं मन में।

व्रती अगर दुर्घटना में मरता तो मन में सवाल उठते—दुर्घटना से बचा जा सकता था या नहीं ? व्रती ज़रा संभल जाता, तो क्या होता। सुजाता का अगर दिव्यनाथ की तरह जन्मपत्री पर विश्वास होता तो मन में प्रश्न उठता—जन्मपत्री में इस दुर्घटना का कोई ज़िक्र था या नहीं—अगर था तो उससे बचने का कोई उपाय था या नहीं ?

व्रती अगर कोई अपराध करते हुए मारा जाता तब लगता, इस घर का लड़का होकर किसके दोष से वह बुरी संगति में पड़कर अपराधी बन गया ? क्या करने पर इससे बचा जा सकता था ?

व्रती तो इनमें से किसी भी श्रेणी में नहीं टिकता। उसका अपराध बस इतना ही था कि इस समाज, इस व्यवस्था पर से उसका विश्वास उठ गया था। उसे अहसास हुआ था कि जिस रास्ते पर समाज, राष्ट्र चल रहा है, उस रास्ते से मुक्ति नहीं मिलेगी। अपराध उसका इतना ही था कि उसने सिर्फ़ नारे लिखे ही नहीं, उन नारों पर विश्वास भी किया था ! दिव्यनाथ और ज्योति ने व्रती की मुखाग्नि तक नहीं की ! व्रती क्या इतना समाज-विरोधी था कि उस-जैसों की लाश काँटापुकूर में लावारिस लाशों के साथ पड़ी रहे ? रात होने पर पुलिस के पहरे में गाड़ी पर लादकर श्मशान ले जायी जाये और फिर उसे फूंक दिया जाये ?

रात को लाशें जलायी जाती हैं। जिनको श्राद्ध-शांति पर विश्वास है वे लोग भी सुबह के उजाले में श्राद्ध नहीं कर सकते। उन्हें इंतज़ार करना पड़ता है—सारा दिन लाल सूजी हुई आँखें लेकर। फिर रात को जाकर

किसी घाट-ब्राह्मण को पकड़ना पड़ता हैं। ब्राह्मण हर किसी से कुछ फ़ीस लेकर रातों-रात झटपट श्राद्ध खत्म कर डालता है। व्रती ने नारे लिखे थे। पुलिस ने जब उसके कमरे की तलाशी ली थी तब सुजाता ने नारों की लिपि और इबारत देखी थी। व्रती की ही लिखाई थी।

'क्योंकि जेल ही हमारा विश्वविद्यालय है।'

'बन्दूक की नली से ही...।'

'यह दशक मुक्ति के दशक में बदल रहा है।'

'घृणा कीजिये, ढूंढ़कर निशाना बनाइये, नाश कीजिये बीच के दलालों का।'

'...आज येनान[1] में परिणत हो चला है।'

इबारत सुनी थी सुजाता ने—व्रती जैसे लोग पहले ऐसी ही इबारतें लिखते हैं, फिर दीवारों पर इन्हें उतारते हैं। रातों-रात अँधेरे में लिखते हैं, और कालू जैसों की तरह बेपरवाह होकर, दोपहर ग्यारह बजे जब पूरे महल्ले पर पुलिस का घेराव है, तपन का खून जब तक सूखता भी नहीं, संभ्रात घरों की दीवारों पर लिखते हैं: 'लाल बंगाल के लाल कॉमरेड तपन के लाल खून से...बाज़ार में जलाकर मा...।'

आख़िरी शब्द लिखते-लिखते कालू को गोली लगती है, इसी से वाक्य पूरा नहीं हो पाता, इतना ही रह जाता है।

व्रती जैसे लोग ऐसे ही एक नयी जात के लड़के हैं। नारे लिखने पर सनसनाते हुए कारतूस आयेंगे—यह जानते हुए भी व्रती जैसे लोग नारे लिखते रहते हैं—काँटापुकूर पहुँचने के लिए जल्दी मचाते हैं!

सुजाता तो चाहकर भी व्रती को किसी अपराधी की श्रेणी में नहीं डाल सकी।

व्रती के लिए रोते-रोते ज्योति और दिव्यनाथ ने उसे समझाया था—

1. चीन का एक प्रदेश।

इस समाज में बड़े-बड़े हत्यारे हैं जो खाने की चीज़ों में, दवाइयों में, बेबी-फ़ूड में मिलावट करते हैं, वे ज़िंदा रह सकते हैं। इस समाज में नेता लोग निहत्थे गाँववालों को पुलिस की गोली के सामने धकेलकर खुद मकान, गाड़ी समेत पुलिस के पहरे में बेखटके, निडर होकर ज़िंदा रह सकते हैं। लेकिन व्रती तो उन लोगों से भी बड़ा अपराधी है—क्योंकि उसने विश्वास खो दिया था—इस मुनाफ़ाखोर, स्वार्थान्ध, व्यवसायी समाज और उनके नेताओं पर विश्वास खो दिया था। यह विश्वासहीनता जिस बच्चे, किशोर या युवक के मन में घर बना लेती है, उसकी उम्र बारह, सोलह या बाईस की, चाहे जो भी हो, उनके लिए एक ही सज़ा निश्चित है —मृत्यु।

छाती के बल ज़मीन पर रेंगने वाले, हवा का बदलता हुआ रुख देखकर मत बदल देने वाले, सुविधावादी कलाकार, साहित्यिक बुद्धिजीवियों के इस समाज को जो लोग घृणित समझते हैं—उन सब लोगों की सज़ा निश्चित है—मौत !

उन लोगों की सज़ा है मौत ! सबको उनकी हत्या का अधिकार है। सब दलों और मतों के लोगों को इन दलहीन तरुणों की हत्या करने का निर्बाध, जनतांत्रिक अधिकार है ! क़ानून की अनुमति इसके लिए नहीं चाहिए।

इन आस्थाहीन तरुणों की अकेले या एक साथ, झुंड-के-झुंड की हत्या की जा सकती है। गोली, छुरा, भाला, बल्लम—जो कोई भी हथियार मिले, उससे शहर के किसी भी हिस्से में, किसी भी दर्शक या दर्शकों के सामने ऐसे तरुणों को मारा जा सकता है ! ज्योति और दिव्यनाथ ने यह सब-कुछ सुजाता को तोते की तरह रटाया था, और सुजाता ने सिर हिलाकर कहा था : 'नहीं !'

व्रती की मृत्यु के पहले प्रश्न था—क्यों आस्थाहीनता पर ही व्रती की असीम आस्था हो चली थी ?

उसकी मृत्यु के बाद का प्रश्न था—व्रती चैटर्जी की फ़ाइल तो बंद हो गयी, लेकिन उसकी हत्या करके क्या इस आस्थाहीनता की ज्वलंत आस्था को हमेशा के लिए ख़त्म कर दिया गया ? व्रती नहीं है, व्रती आदि लोग नहीं

हैं—इसी से क्या सब-कुछ ख़त्म हो गया ?

प्रश्न था—व्रती की मृत्यु क्या निरर्थक है ? क्या उसकी मौत का अर्थ है—एक बहुत बड़ा 'नहीं' ?

सब-कुछ अलीक था, अस्तित्व-हीन था। उसकी आस्थाहीनता, उसकी निडरता ? उसका अदम्य आवेग ? सामने मौत खड़ी है, यह जानकर भी समू, विजित, पार्थ और लालटू को आगाह करने के लिए ही सोलह जनवरी को नीली कमीज़ पहनकर, सुजाता को भुलावे में रखकर, बाहर चले जाना निरर्थक था ? जाने से पहले उसका सुजाता को देखना, सुजाता के सुंदर, अभिजात प्रौढ़ चेहरे की पीड़ा की एक-एक रेखा को मन में सहेज लेना, यह सब-कुछ निराधार था ?

सुजाता ने धीरे से सिर हिलाया था, और कमरा बंद करके बाहर निकल आयी थी। चाबी उस दिन से उसी के पास है, उसी के पर्स में। दो साल हो गये हैं—रोज़ रात को उठकर यहाँ आती है वह, कमरा साफ़ करती है, धूल-गर्द पोंछती है। बिस्तर फिर से बिछा दिया है उसने, जूते अलगनी के नीचे रख दिये हैं। कपड़े तहाकर रखे हैं। उसकी ही तरह कई हज़ार माँएँ क्या इसी तरह छुप-छुप कर अपने बेटों के कपड़ों को, तसवीरों को छूती हैं ?

व्रती के कमरे में बैठी रहती है सुजाता ! मन-ही-मन उससे बातें करती है। आँखें बंद करके सोचती है—व्रती पास ही है। सोचती है कि और भी कितनी-कितनी माँ इसी तरह छुपकर बेटे को पास बुलाना चाहती होंगी। वह बातें करती है—कभी व्रती जवाब देता है, कभी नहीं।

ज्योति के कमरे में टेलीफ़ोन की घंटी बज रही है। टेलीफ़ोन उठाने गयी तो ये सब बातें याद आ गयीं।

समू, लालटू, विजित और पार्थ के घरों में तो फ़ोन नहीं है न ! घंटी की आवाज़ से कोई भी उनको नींद से नहीं जगायेगा। आज उन सबकी

माताएँ क्या सोच रही होंगी—आज की इस सुबह ?

विनी भारी क़दमों से नाइलॉन की नाइटी पहने दरवाज़ा खोल देती है। उसके चेहरे पर खीज की छाया है। इतनी जल्दी न तो उसकी नींद ही खुलती है, न वह उठना ही चाहती है।

नियमित रूप से नींद और आराम की ज़रूरत है विनी और ज्योति—दोनों को। एक-दूसरे से बेहद प्यार करते हैं सुजाता के बेटा और बहू। हालाँकि सुमन जब आठ महीने का था तभी से दोनों के बिस्तर अलग हैं, फिर भी सुखी प्रेमी-दंपति के नाम से प्रसिद्ध हैं वे दोनों! शरीर-सुख बहुत बहुमूल्य है, सुजाता को तो यही मालूम था, लेकिन विनी और ज्योति ने प्रेम और शरीर के सुख को अलग-अलग रखा है। उनका प्यार दूसरी तरह का है। उनकी शादी की साल-गिरह में ज़ोर-शोर से पार्टी होती है। दोनों एक साथ घूमते हैं; इधर-उधर जाते हैं। सुजाता ने सुना है, विनी क्लब में ज्योति के अलावा और किसी के साथ नहीं नाचती—इससे समाज में उसका बड़ा नाम है।

सुजाता ने फ़ोन उठाया।

'कौन ?'

'मैं नंदिनी।'

'नंदिनी ?'

'हाँ, मैं लौट आयी हूँ।'

'कब ?'

'परसों।'

'ओह !'

'आपसे एक बार मिलना ज़रूरी है। आपके घर में नहीं आऊँगी। आज आप बैंक जायेंगी ?'

'आज तो नहीं जाऊँगी, नंदिनी। आज मेरी छोटी लड़की तुली की सगाई है। तुम बताओ, कहाँ पर मिलना हो सकता है ? शाम को छोड़कर किसी भी समय आ सकती हूँ।'

'ठीक चार वजे ?'

'आ सकती हूँ। कहाँ पर ?'

'एक पता दे रही हूँ। आपके घर से ज़्यादा दूर का नहीं है।'

'वताओ।'

नंदिनी ने पता वताया। सुजाता ने फ़ोन नीचे रख दिया। नंदिनी ! व्रती नंदिनी से प्यार करता था, लेकिन सुजाता ने नंदिनी को कभी नहीं देखा।

ज़्योति की तरफ़ देखा। सोते हुए, हाँ सिर्फ़ सोते हुए ही ज्योति के चेहरे पर व्रती के चेहरे की झलक देख पाती है सुजाता।

सुजाता वाहर वरामदे में आकर खड़ी हुई। थोड़ी-थोड़ी ठंड-सी लगने लगी ! नंदिनी और व्रती ने मिलकर एक कविता की पत्रिका निकाली थी। उन लोगों ने साथ मिलकर नाटक किया था। सुजाता वीमारी की वजह से जा नहीं पायी थी। घर से और कोई भी नहीं गया था—सिर्फ़ हेम ने कहा था : 'छोटे भैया के लिए वड़ी तालियाँ वजीं, समझी, माँजी ! सव लोग कितनी तो वड़ाई कर रहे थे !'

हेम ही वातें करती थी व्रती के साथ। जव व्रती सुजाता से दूर हटता जा रहा था, अजनवी वनता जा रहा था, और वह उससे वातें करते हुए भी डरती थी तव हेम ही उससे कह सकती थी : 'राज-कारज में जा रहे हो, यह पता है भैया, लेकिन खाना खाकर मुझे पार लगा जाओ, हाँ !'

जव 'दीघा जा रहा हूँ' कहकर व्रती रास्ते में उतरकर कहीं और चला गया था, तव हेम ने ही उसका सूटकेस ठीक-ठाक कर दिया था।

हेम ने कहा था : 'छोटे भैया की एक लड़किन से दोस्ती है, माँजी ! रसोइया देख आया है; छोटे भैया वाहर जाते हैं तो वह रास्ते पर खड़ी इंतज़ार करे है, फिर दोनों साथ चले जाये हैं। काली-सी है लड़की।'

वही नंदिनी ! सुजाता का दिल क्यों धड़क रहा है ? वैलारगन खाकर ज़्यादा देर तक लेटी नहीं, इसीलिए ? नंदिनी ने फ़ोन किया था, इसलिए ?

बाथरूम से सजधज कर निकली विनी। गरदन तक कटे रूखे बाल, नीली साड़ी पर नीला कार्डिगन! मैचिंग के बिना कभी कपड़े नहीं पहनती विनी, नीपा भी नहीं, तुली भी नहीं। विनी कैसी धुली-धुली-सी लग रही है!

'किसका फ़ोन था, माँ?'

'नंदिनी का।'

'नंदिनी?'

'व्रती की दोस्त।'

विनी का चेहरा उत्सुकता से भर गया।

'नीचे क्यों जा रही हो, माँ?'

'क्या-क्या बनेगा, देख आऊँ। तुम सुमन को जगाओ। उसको स्कूल जाना है न, बस आयेगी।'

'नीचे तो तुली ही गयी है।'

सुजाता हँसी थोड़ा-सा। आज तुली की सगाई है। उसे यह भरोसा नहीं कि आज भी उसकी देखरेख के बिना इस घर में चाय, ब्रेकफ़ास्ट, दोपहर का खाना, शाम को कमरे को सजाना—यह सब-कुछ हो जायेगा। किसी पर भरोसा नहीं है उसे।

सोलह साल की उम्र में तुली पढ़ाई छोड़कर क्राफ़्ट सीखने लग गयी थी, तभी से घर का सारा भार संभाल लिया था। दर-असल सी० ए० फ़र्म चल जाने पर दिव्यनाथ ने सुजाता को नौकरी छोड़ देने के लिए कहा था। सुजाता ने किसी की नहीं सुनी थी। सासजी व्रती के आठ का होने तक ज़िंदा थीं। जब तक वह थीं, अपनी मरज़ी की एक साड़ी तक ख़रीदने का अधिकार उसे नहीं था।

इसीलिए इस बैंक में आना-जाना, अपने मन के मुताबिक़ जीवन को बिता पाना—यह सब-कुछ सुजाता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हो उठा था। इसी से कहने पर भी उसने नौकरी नहीं छोड़ी थी।

तुली बिलकुल अपनी दादी पर गयी है। सुजाता ने नौकरी नहीं छोड़ी—इसलिए तुली के पिताजी और दादी बहुत नाराज़ थे। दर-असल सुजाता अपनी मरज़ी से चलना चाहती है। घर-गृहस्थी में उसका मन नहीं है—बच्चे जैसे बोझ हों, यही सब बातें माँ-बेटे में हर समय चलती रहती थीं।

तुली भी कहती थी, अब भी कहती है कि जिस घर की गृहिणी दस घंटे घर से बाहर रहती है उस घर में लड़की को तो मजबूर होकर सब-कुछ करना पड़ता ही है। 'मैं न करूँ तो कौन-सा काम होता है यहाँ ?'

हर समय तुली असंतुष्ट और नाख़ुश रहती है। कभी-कभार चाय बनानी या कभी क्या खाना बनेगा यह बताना—यह सब-कुछ जैसे बड़ी क़ुरबानी कर रही हो, इस ढंग से करती है। शायद शादी होने के बाद सुधर जायेगी !

क्राफ़्ट सीखने के बाद एक सहेली के साथ साड़ियों की छपाई की दुकान खोल ली थी तुली ने। इसी समय टोनी कपाड़िया के साथ जान-पहचान हो गयी। आज, व्रती के जन्मदिन के दिन तुली की सगाई करने का प्रस्ताव टोनी की माँ ने ही रखा था। मिसेज़ कपाड़िया के गुरु स्वामी-जी अमेरिका में रहते हैं। उन्होंने ही बताया कि यह दिन ही उनके कैलेंडर के मुताबिक़ सबसे शुभ दिन है। स्वामीजी के शिष्य उन्हीं के कैलेंडर को मानते हैं। उस कैलेंडर में कोई छुट्टी-वुट्टी नहीं है। तीन सौ पैंसठ दिन ही हैं ध्यान और कर्म के दिन। टोनी की माँ की बातें करते-करते दिव्यनाथ और तुली इस बारे में सुजाता से पूछना ही भूल गये !

नीचे उतरते ही सुजाता ने भाँप लिया कि तुली बहुत देर से मन-ही-मन उससे झगड़ रही है। आज उसके जीवन का एक ख़ास दिन है, लेकिन सुजाता को इसमें जैसे कोई ख़ास बात नहीं दिखायी दे रही है, इसी पर उसे ग़ुस्सा आ रहा है।

'माँ, तुम क्या खाओगी ?'
'थोड़ा-सा नीबू-पानी लूँगी।'
'क्यों, दर्द बढ़ा है क्या ?'

'नहीं, अभी नहीं है।'

'पता नहीं कि तुम यह ख़तरा क्यों उठा रही हो ! ऐपेन्डिक्स का ऑपरेशन तो आजकल कुछ भी नहीं रहा है।'

हमेशा ऐसा नहीं होता—ऐपेन्डिक्स का ऑपरेशन होना चाहिए स्वेच्छा पर। इसके सूजने और पकने से पहले ज़रा-ज़रा दर्द होने पर ही कटवा देना चाहिए। सुजाता के वक़्त ऐसा नहीं हुआ। इसके अलावा डॉक्टरों को शक है कि सुजाता के ऐपेन्डिक्स में शायद सड़ाँध पड़ गयी है। ठीक समय पर ऑपरेशन न हो तो सड़ाँध शुरू हो जाती है। फट जाये तो और भी ख़तरनाक है। लेकिन सुजाता का दिल कमज़ोर है; ख़ून की अलग से कमी है—इसलिए ऑपरेशन करना अभी संभव नहीं है। कल ही तो सुजाता यह सब पता लगाकर आयी है, लेकिन तुली से उसने यह सब-कुछ नहीं कहा ! सिर्फ़ कहा : 'कराऊँगी ऑपरेशन।'

'कब ?'

'तेरी शादी निपट जाये तब।'

'शादी तो अप्रैल में होगी।'

'शायद उससे पहले ही करा लूँ। हेम, हेम !'

'क्या, माँजी !'

'मुझे थोड़ा सा नीबू-पानी देना।'

'इतनी सुबह किसने फ़ोन किया था ?'

'नंदिनी ने।'

तुली का चेहरा लाल हो गया। भौंहें सिकुड़ गयीं। उसने केतली में ज़ोर-ज़ोर से टकराते और आवाज़ करते हुए चम्मच चलाया और देखा, चाय का रंग आया है या नहीं। फिर बुड़बुड़ाने लगी : 'एक घंटी बजाने का टाइमटेबल बनाना चाहिए, जिससे सब लोग आकर एक साथ चाय तो पी जायें ! जब जिसकी मरज़ी हो तब आता है; इससे औरों को भी तकलीफ़ होती है, और मेरी तो मुसीबत !'

सुजाता कौतुकवश तुली को देखने लगी। ठीक ऐसी ही आवाज़ में उनकी सास बातें किया करती थीं। बच्चों का सुस्ती से लेटे रहना, जब

मरज़ी हो खाना पीना—यह सब उनको फूटी आँखों नहीं सुहाता था। हर समय पीछे लगी रहती थीं सबके, चिड़चिड़ाती थी। सबने उनके अनुशासन को मान ही लिया था : सिर्फ़ व्रती अकेला ऐसा था जिसने बचपन से ही उनका रौब नहीं माना था। देर से सोकर उठता था। क़ायदे के अनुसार खाने की टेबल साफ़ कर दी जाती थी। व्रती रसोई में जाकर हेम के पास पीढ़े पर बैठकर खाता था।

'अजीब घर है, और उसका अजीब डिसिप्लिन,' तुली ने दबी असंतुष्ट आवाज़ में कहा।

अभी से, इस अट्ठाइस वर्ष की उम्र से ही इतना असंतोष भरा है उसमें! अभी पूरी ज़िंदगी पड़ी है। 'ज्योति देर से सोता है। उसे उठाने से क्या फ़ायदा? और तेरे पिताजी तो लस्सी पियेंगे।'

'वह तो मैंने उनके मालिशिये के जाते ही भेज दी है। पिताजी की बात नहीं हो रही है।'

'बिनी पूजा करके आ रही है।'

'ढोंग है सब।'

'क्यों? ढोंग क्यों है? तेरी दादीजी तो रोज़ पूजा-पाठ करती थीं, मुझे अच्छा नहीं लगता था। रस्म निभाने के लिए फूल-जल मैं भी चढ़ा देती थी। बिनी को अच्छा लगता है, वह पूजा-पाठ करती है। इसमें तुझे ढोंग कहाँ दीखता है?'

'पता नहीं भई, इंगलैंड में पैदा हुई। वहाँ सोलह साल बिताने के बाद भी इतनी भक्ति कहाँ से आ गयी, पता नहीं।'

'विलायत में बाप का घर है, इसलिए वहाँ रहती थी। वहाँ पले, बड़े होने और पूजा करने में कौन-सा विरोध है? मुझे तो कोई विरोध नहीं दीखता।'

'सचमुच की भक्ति-भावना होती तो कोई बात भी थी। उसके लिए तो पूजाघर तो एक घरेलू साज-सिंगार है!'

'तू भी तो स्वामीजी के मंदिर में जाती है—पार्क स्ट्रीट पर।'

'वह अलग चीज़ है, माँ!'

'मुझे तो नहीं लगता। जिसका जिस बात पर विश्वास है, जो करने

को दिल करता है, वह करे। लेकिन दूसरे का विश्वास ढोंग-ढकोसला और मेरा अपना विश्वास खरा है—ऐसा क्यों सोचा जाये ?'

'व्रती भी दूसरों के विश्वास पर हँसता था। तुझे स्वामीजी पर विश्वास है, विनी को अपने पूजा-घर पर। दोनों में एक तरह से समानता ही है। व्रती की भी आस्था थी। दूसरों के विश्वास और उसके विश्वास में बहुत अंतर था। लेकिन उसने कभी दूसरों के विश्वास पर व्यंग्य किया हो, ऐसा मुझे याद नहीं है; वह बहस करता था। बहस में तू हार जाती थी तो ग़ुस्सा हो जाती थी। तुझे नाराज़ करके वह मज़ा लेता था !'

'वह विश्वास करता था, ऐसा क्यों कह रही हो, माँ। किसी तरह का विश्वास उसमें नहीं था।'

'तुली, मैं तेरे साथ व्रती के बारे में कोई बातचीत नहीं करना चाहती।'

'क्यों ?'

'फ़ायदा क्या है ? तू उसे पहचानती ही नहीं।'

'अभी तक तुम...।'

'तुली, तू चुप हो जा।'

सुजाता का हाथ काँप गया। उसने अपने को संभाल लिया और हेम से कहा : 'विनी को चाय पीने के लिए बुला, हेम।'

तुली, उनकी बेटी, ने उनकी तरफ़ अपरिचित, जलती हुई आँखों से देखा और फिर अजनबी की-सी आवाज़ में बोली : 'आज लॉकर से गहने क्या मुझे ही निकालने पड़ेंगे ?'

'मैं चली जाऊँगी।'

'शाम को तुम घर पर रहोगी ?'

'रहूँगी।'

'मुझे उम्मीद है कि आज तुम टोनी के दोस्तों के साथ ज़रा सहज ढंग से पेश आओगी।'

'तुम लोग क्या सरोज को भी बुला रहे हो ?'

'बुलाया तो है। पता नहीं, आयेगा कि नहीं।'

'सरोज को ?'

सरोजपाल ! 'सरोजपाल तुम्हें माफ़ नहीं किया जा सकता !' अक्षम, नपुंसक, अलकार। दो वरसों से सरोजपाल ने इस व्यापक तहक़ीक़ात, तलाशी और दंडविधान का भार संभाला है। उसकी इस असाधारण कर्म-दक्षता और निर्भीकता के लिए...।

मुक्ति दशक ! सरोजपाल सिपाहियों-संतरियों को दलवद्ध कर रहा है, दलपति की तरह निर्देश दे रहा है—'काली माता रक्त माँगती है।' सरोज पाल ! सुंदर चेहरा, सुंदर हँसी, वात करने का सुंदर लहज़ा : 'यस् मिस्टर चैटर्जी, आई क्वाइट ऐश्योर यू, मिसेज़ चैटर्जी, मैं जानता हूँ, मेरी भी माँ है।' सरोजपाल ! 'यस्, सर्च द रूम। नहीं मिसेज़ चैटर्जी, आपका वेटा अपनी माँ से झूठ वोला था। वह दीघा नहीं गया था। ही व्रोक हिज़ जर्नी। मिसगाइडिड यूथ ! यस्, कैंकरस ग्रोथ ऑन द वॉडी ऑफ़ डेमोक्रेसी।[1] नहीं मिस्टर चैटर्जी, किसी अख़वार में नहीं छपेगी। आप टोनी के होने वाले ससुर हैं...टोनी मेरा...।' सरोजपाल !

तुली सुजाता को घूर रही है।

'इनफ़ इज़ इनफ़, माँ। दो साल हो गये, तुमने इस घर को क़ब्र वना कर रखा है। पिताजी तुम्हारे सामने मुँह नहीं खोलते; वड़े भैया अपराधी-से वने रहते हैं। इस तरह की कोई घटना हो जाये तो सभी उसे दवाने की कोशिश करते हैं। यह स्वाभाविक ही है। व्रती इज़ डैड। यू मस्ट थिंक ऑफ़ द लिविंग।[2] तुम...।'

'इतनी जल्दी वात दवा देने की कोशिश करते हैं ? लाश शनाख्त होने से पहले ही ? टेलीफ़ोन मिलते ही वाप के मन में इच्छा नहीं होती कि दौड़कर चला जाऊँ, देख आऊँ या उससे पहले यह ख़याल आता है कि गाड़ी को काँटापुकूर पर खड़ी करना ठीक नहीं होगा !'

---

1. व्रती रास्ते में ही उतर गया था। भ्रान्त नवयुवक ! जनतंत्र की काया में पनप रहा कैंसर का रोग !
2. व्रती मर चुका है। तुम्हें जीवितों के वारे में सोचना चाहिए।

या फिर फ़ोन आने से बहुत पहले ही व्रती अपने पिता और भाई के लिए मर चुका था ? क्या इसीलिए सुजाता विश्वास नहीं कर सकी थी और उन लोगों ने अविश्वास नहीं किया था ? इसीलिए ख़बर को दबा देने की कोशिश में दोनों गिरते-पड़ते सिफ़ारिश के लिए पहुँच गये थे।

अचानक सुजाता को लगा—यह एक रहस्यपूर्ण नाटक है और वे सब लोग इस नाटक के पात्र हैं !

हालाँकि व्रती इसी घर का लड़का था, लेकिन फिर भी उसकी निर्मम हत्या हो जाने के बाद उसके बाप, भाई, बहनें अपने-अपने समाज में किस तरह उसकी मौत का ब्यौरा देते हुए अटपटा महसूस करेंगे, उन्हें कितनी असुविधा होगी—यह सब व्रती ने मरने से पहले नहीं सोचा और इसी से इनके सजे-सँवरे अचंचल जीवन में थोड़ी-सी उथल-पुथल मच गयी। इसी उथल-पुथल के कारण वह आज इनके लिए मृत है। इन लोगों ने मन-ही-मन दो गुट बना लिये हैं—एक में व्रती और सुजाता हैं, दूसरे में बाक़ी सब।

'चाहे जो हो, बाप, भाई-बहनों के लिए यह बात कितनी तकलीफ़देह है कि...।'

'देखिये, मेरा लड़का था...।'

'सी, माई ब्रदर वाज़...।'

'मेरा छोटा भाई एक...।'

'टोनी, व्रती...।'

सुजाता इन सबके लिए विपक्ष-दल की है, क्योंकि अपने नियमित जीवन में उथल-पुथल लाने के लिए उसने कभी भी व्रती को दोषी नहीं ठहराया, छाती पीटकर नहीं रोयी, किसी के कंधे पर सिर रखकर आँसू नहीं बहाये, और न ही सांत्वना माँगी। उसको यह लगा था कि जो लोग सबसे पहले अपनी सुविधा की बात सोचते हैं उनसे व्रती के बारे में बातें करके सांत्वना न मिलेगी, न वह लेगी ही। व्रती के बाप, भाई-बहनों से बढ़कर अपनत्व उसे अपनी नौकरानी हेम में महसूस हुआ था।

सुजाता को यह भी लगा कि जिस दिन से व्रती ने बदलना शुरू किया

उसी दिन से इन सवने उसको मन-ही-मन व्रती के दल में रख दिया था। ये लोग जो करते थे, वह यह सव नहीं करता था। वड़े होकर आने वाली ज़िंदगी में भी व्रती उनके जैसा नहीं करता, यह उनको पता था। इसलिए व्रती किसी दूसरे शिविर का वासी था।

व्रती अगर ज्योति की तरह खूव पीता होता, नीपा के पति की तरह शरावी होता, व्रती के पिताजी जैसे अभी तक टाइपिस्ट के साथ रंगरेलियाँ मनाते हैं वैसे वह भी करता होता, टोनी कपाड़िया की तरह अव्वल दर्जे का चार सौ-वीस होता, अपनी वहन नीपा की तरह—जो अव भी अपने फुफेरे देवर के साथ रह रही है—दुश्चरित्र होता, तव शायद ये लोग व्रती को विपक्षी दल का नहीं मानते, या कम-से-कम अगर उनको यह उम्मीद होती कि वड़े होकर व्रती उन्हीं लोगों की तरह निकल आयेगा, तव भी शायद वे उसे अलग ख़ेमे का नहीं समझते !

इनमें से किसी तरह की जीवनचर्या की ओर व्रती का झुकाव नहीं था। सुजाता को भी अपने पति, सन्तान, दामाद के वरताव को लेकर कोई दु:ख नहीं था। पहले तो, जैसे कि हमेशा से होता आया है, सिर झुकाकर ही सव स्वीकार कर लेने की सीख उसे मिली थी। दूसरे, उसके मन में इन चीज़ों को लेकर कभी कोई प्रश्न नहीं उठा; प्रश्न करने का नैतिक अधिकार उसे है या नहीं, यह भी उसे नहीं पता था। दु:ख उसको हुआ; वेहद दु:ख पाया है उसने। दिव्यनाथ ने हमेशा वाहर की लड़कियों के साथ मौज-वहार की है। सास की तरफ़ से इसको सस्नेह वढ़ावा ही मिला है : 'उनका लड़का मर्द का वच्चा है; जोरू का गुलाम नहीं !' सुजाता को चोट पहुँची है, लेकिन फिर उसने सोचा : किसे इस दुनिया में खालिस सुख-ही-सुख मिल पाता है !

लेकिन व्रती विलकुल ही दूसरी तरह का था। जव वहुत छोटा था तव भी उसे झूठ वोलकर वहलाया नहीं जा सकता था। समझाकर कहो तो मान जाता था। वात माननी है—इसलिए डाँटो-फटकारो तो कभी नहीं मानता था। जैसे-जैसे वह वड़ा होता गया, उसके अन्दर सुजाता ने एक अलग, विलकुल अलग दुनिया को आकार पाते देखा।

उसके साथ-साथ कितावें पढ़कर, उसे चिड़ियाघर ले जाते समय,

उसके दोस्तों को बुलाकर उनसे बातें करके सुजाता धीरे-धीरे उसी में डूबी रही। जैसे उसके जीते रहने का युक्तिसंगत एकमात्र कारण व्रती ही बनता गया। शायद व्रती को लेकर ममत्व की बहुत ही गहरी भावना उसमें जाग उठी थी।

तभी तो अकेले उसके लिए सुजाता ने पति और सास की बातों को नहीं माना। निरर्थक निर्ममता या फिर बिलकुल सिर चढ़ा लेना—ये दोनों ही बातें व्रती को नहीं मिल सकीं। दूसरे बच्चों पर सासजी का हमेशा अधिकार और रौब रहा, लेकिन व्रती के वक़्त सुजाता ने अपना अधिकार नहीं छोड़ा। ज़िद्दी, संवेदनशील, कल्पनाशील व्रती को सुजाता ने अपनी छाया के घेरे में लेकर पाला-पोसा था। पति और सास के अधिकार की आँच से उसे बचाने में उसको काफ़ी तकलीफ़ उठानी पड़ी थी।

इसीलिए क्या ये लोग आज भी उसे माफ़ नहीं कर सकते? या व्रती को लेकर इनके मन में कोई पाप की ग्रंथि है? उसी को ढका रखने के लिए ही क्या तुली कभी इतनी रूखी हो उठती है, दिव्यनाथ ऐसे अपराधी-से सकुचा कर रहते हैं और ज्योति इतना नम्र बना रहता है?

तुली को सुजाता ने यह सब-कुछ भी नहीं कहा; सिर्फ़ बोली: 'तुली, तू सचमुच बहुत सुखी होगी।'

▫ दोपहर ▫

दो लाख लोगों की बस्ती, यह कॉलोनी किसी योजना के आधार पर नहीं बसायी गयी। पश्चिम बंगाल में यही कॉलोनी अनधिकृत या ज़बरदस्ती दख़ल करके बनायी गयी थी। पहले-पहल यहाँ एक ज़मींदार की कुछ ज़मीन थी—कुछ बगीचे, बहुत-से पोखर, तालाब और कुछ छोटे गाँव !

उन्नीस सौ सैंतालिस के बाद बढ़ती आबादी के दबाव से इस इलाक़े का नक़्शा ही पलट गया। मैदान, दलदल, नारियल के बाग, धान के खेत, गाँव—सब-कुछ को जैसे निगलकर यह कॉलोनी देखते-देखते बढ़ उठी।

इस इलाक़े से हमेशा विरोधी दल को ही वोट मिले हैं—शायद इसी लिए सरकार ने यहाँ पक्की सड़क, स्वास्थ्य-केन्द्र, काफ़ी संख्या में हैंड-पम्प, बस-रूट—इन सबका कोई भी बंदोबस्त नहीं किया। इन बीस वर्षों में जो लोग हालात बदलने पर धनी हो गये, उन लोगों ने भी कुछ नहीं किया।

अब इतने दिनों बाद सी० एम० डी० ए०[1] की फ़ाइलें कुछ सरकने लगी हैं। इसी से सड़क की खुदाई का काम चालू हुआ है।

अब तो और कोई अशांति नहीं है; कोई डर नहीं है। अब दूकानों के पल्ले धड़ाधड़ बन्द नहीं होते। घर-घर के दरवाज़े भी बन्द नहीं होते;

1. कैलकटा मेट्रोपॉलिटन डेवलपमेंट अथॉरिटी।

रिक्शेवाला सिर पर पैर रखकर नहीं भागता, और न ही कोई राहगीर या सड़क का कुत्ता। आजकल अचानक कहीं बम फटने की आवाज़ भी नहीं सुनायी देती है; और न ही सुनायी पड़ता है—'मार-मार', हो-हल्ला, मरते हुओं की कराह या मारने वाले का उल्लास !

कालीगाड़ी[1] अब कभी फ़र्राटे से सड़कों पर नहीं दौड़ती; हैलमेट पहने हुए पुलिस का सिपाही या मिलिटरी का जवान अब किसी किशोर को खदेड़ता हुआ नहीं ले जाता। पुलिस-वैन के पीछे रस्सी से बँधा अर्द्धजीवित शरीर सड़क की पटरी से घिसटता हुआ, खिंचता हुआ दिखायी नहीं देता !

अब सड़क पर फैला हुआ खून, माताओं के विलाप के स्वर, सब ग़ायब हो गये हैं। दीवार पर लिखे वाक्य और नारे भी पोत दिये गये हैं—दब गये हैं नयी लिखाई के नीचे वे—'बहुत-बहुत दिनों तक जियें कामरेड मजुमदार', 'विप्लवियो, तुम्हें नहीं भूलेंगे', 'महल्ले के निर्दोष किशोरों के हत्यारों के लिए कोई माफ़ी नहीं...।' यह सब लिखाई विजयी की अभ्यर्थना के तले दबकर रह गयी है !

आजकल मरते-मरते भी कोई किशोर-कंठ चिल्लाकर नारे नहीं लगाता। ढाई साल की विशृंखलता, जिससे यहाँ का व्यवस्थित जीवन उलट-पुलट गया था, उसका नामोनिशान भी नहीं मिलता कहीं पर।

सुखी, शांति-प्रिय परिवार फिर लौट आये हैं। आजकल सिर्फ़ दिखायी देती है चावल की बेरोक-टोक चोर-बाज़ारी, दिन-रात सिनेमा के विज्ञापन, और नर-रूपी देवता के मन्दिरों के सामने मुक्तिकामी जनता की पगलाई भीड़ !

कल के हत्यारे आज चोला बदल कर, नये चेहरे लगा, निडर होकर घूमते-फिरते हैं। एक अध्याय की समाप्ति हो गयी। विराम। अब एक महा-उपन्यास का नया अध्याय शुरू हो रहा है।

अब तो सिर्फ़ सँकरी सड़कों के मोड़ों पर, शरीर के अंगों पर खुले घावों की तरह, जगह-जगह पर उभरे स्मृति-स्तम्भ दिखलायी देते हैं। लेकिन इन स्मृति-स्तम्भों में समु, विजित, पार्थ, लालटू आदि लोगों के

---

1. मरे हुओं को ढोकर ले जाने वाली गाड़ी।

नाम नहीं हैं। व्रती का तो है ही नहीं। उसका नाम, उन लोगों के नाम सिर्फ़ कुछ लोगों के दिलों में ही ज़िंदा हैं। वह भी शायद ही !

समु के घर बैठी थी सुजाता। लॉकर से गहने निकाल लायी थी। सब उसके पर्स में पड़े हैं। नीपा, बिनी, तुली और व्रती की बहू के लिए किसी समय इन गहनों को चार हिस्सों में बाँटा गया था। नीपा और बिनी को जो देना था, दे दिया। तुली कहती है—व्रती का हिस्सा अब उसे ही मिलना चाहिए। नातिन और पोते की बहू के लिए थोड़ा-बहुत रखकर शायद उसी को दे देगी। उसने खुद गले में चेन, कानों में छोटे टॉप्स और पतले कड़ों के अलावा और कभी कुछ नहीं पहना है। व्रती के होने के बाद रंगीन साड़ी भी नहीं पहनी।

इस समय उसका चेहरा थका, उखड़ा-सा लग रहा है। समु की माँ सामने बैठी चुपचाप आँसू बहा रही थी। दुबला, काला चेहरा—आँसुओं में डूबा हुआ। पिछले एक साल में उनका चेहरा और भी झटक गया है। मोटे कपड़े की बिना किनारी की धोती पहने है।

इन लोगों का घर बड़ा टूटा-फूटा है। खपरैल की छत पर काई जमी है। चारों तरफ़ की दीवार टूटी हुई है। कहीं-कहीं कागज़-गत्ता चिपकाया हुआ है। लेकिन फिर भी पिछले दो सालों से सुजाता को यहीं पर आकर शांति मिलती है। उसे लगता है कि वह किसी अपनी जगह पर आ गयी है।

पहली बार उसे देख समु की बड़ी बहन रो पड़ी थी। इस बार उसे देखते ही उसने भौंहें सिकोड़ लीं। समु के मरने के बाद ही उसके पिताजी गुज़र गये थे। तब से उसकी दीदी ही सुबह से शाम तक ट्यूशन करके घर का गुज़ारा चला रही है। जैसे चिता की आग में शरीर की चिकनाई जलकर ख़ाक हो जाती है, वैसे ही गृहस्थी की आग में जलकर समु की दीदी झुलस गयी थी। उसके सारे चेहरे पर हर वक़्त रूखापन और ग़ुस्सा फैला रहता है। समु उसको मारकर छोड़ गया है ! वह इस परिवार का अकेला लड़का था। वह अच्छे कॉलेज में पढ़ेगा, इसीलिए समु के पिताजी ने उसकी बहन को पढ़ने नहीं दिया। उसने ट्यूशन करके अपनी पढ़ाई का खरचा चलाया था।

समु की दीदी ने सुजाता को घूरकर देखा और बाहर चली गयी। सुजाता समझ गयी कि अब यह ही परिवार की मुखिया है, और यह नहीं चाहती कि सुजाता उसके भाई की यादों के ज़ख्म कुरेदने के लिए हर साल यहाँ आये। सुजाता बहुत असहाय-सा महसूस करने लगी। उसने समु की दीदी की ओर बेबसी से देखा। उसने कहना चाहा : मेरे लिए आने-जाने का यह दरवाज़ा बन्द मत करो—लेकिन कुछ कह नहीं पायी। समु की दीदी चली गयी।

समु की माँ रो रही थी और सुजाता चुपचाप बैठी थी।

'ई लोग कहत है, रोवो जिनि माई, ऊ ना लौटव। कहत है, तू त ऊ लोगन से अच्छी, पारथ की माई का एक बिटवा न रहा अऊर दूसर भी घर छोड़ गवा। मउसी के रहत रहा अब। जाने कऊन ठिकाना ऊ का!'

'अभी तक नहीं लौटा ?'

'नहिना बहनी, कहत है ऊ लोग अब कबहू न लौटव, बस जिंदाई रहबौ इत्ताई। भाग फूटे हमार!'

समु की माँ रोने लगी।

पहली बार यहाँ आते समय सुजाता काफ़ी हिचकिचा रही थी। समु की माँ तभी-तभी विधवा हुई थी। मुहल्ले में आकर समु का नाम लेते ही लोगों ने उसकी ओर हैरानी से देखा था। पहले कोई बताना ही न चाहता था; आखिरकार एक ने कहा था : 'ऊ रहा घर।'

सुजाता की क़ीमती साड़ी, अभिजात चेहरा, खिचड़ी बालों से घिरे प्रौढ़ चेहरे पर छायी कुलीनता—यह सब-कुछ देखकर समु की माँ अचकचा के आँखें फैलाकर देखती रही थी।

'मैं व्रती की माँ हूँ।'

इतना सुनते ही 'समु रे' कहकर वह फूट-फूटकर रोने लगी। सुजाता से लिपटकर कहने लगी : 'ऊ तुम्हार बिटवा रहा दिदिया, जानै-बूझके जान गँवाय दिहिस। ऊ समु को ख़बरदार करे आय रहा, त इनका मालूम होई गवा कि अब चार जनि मोहल्ला मा आय गयन, अब जाने रात कटबौ

कि न। बरती आय के पूलिस, समु कहाँ ह मउसी, ऊ को कुछ कहि के हम चले जाब। हम कहा, विटवा इतनी रात मा जा सकबो? हियई रहो जिनि। भिनसारे चले जाव। मगर दिदिया, रात कहाँ कटल वा। हियाँ हमार इ छोटके कमरा मा सम्मु, पारथ, बरती—सब जनि सोये रहल।'

'किस कमरे में ?'

'इसी कमरा मा। कमरा क्या दिदिया, लड़की-वहनों का लेके बरामदे मा सोये गयी रहिन। बरामदे मा वाड़ लगी है न! इस कमरा मा ऊ लोगन। और हम खिड़की मा वइठे रहे कि कौन आया देखवौ।'

'यहाँ रात बितायी थी व्रती ने ?'

'हाँ, दिदिया! हमार ऊ गरीब दुकानदार रहे। रुपया-पैसा नहीं कछु भी। बस तख्ती, पिनसिल, कापी की इककौ दुकान रहिस। ई कमरा वह भी वड़ी मुस्किल से बनाय रहा। हाँ, तो लड़कन कमरा मा रहे। समु के बापू जागे रहे कि लड़कन को उठाय देव। ऊ कोना मा लेट के कइसे हँसत-बतियात रहे। दिदिया, बरती की हँसी हमार आँखन के आगे अब भी दिखत है। सोना राजा विटवा रहा तुम्हार।'

'व्रती यहाँ आता था ?'

'कतनी-कतनी वार। आय रहा, कहत रहा, 'मउसी पानी, मउसी चाह,' बुला-बुलाकर माँगत रहा।'

व्रती यहाँ आता था, यहाँ आकर चाय पीता था, गप्पें हाँकता था, समय बिताता था!

समु की माँ को, उसके कमरे को, दीवार पर टँगे कैलेंडर से कटी तसवीर को, टूटे हैंडल के प्याले को—सब चीज़ों को नयी नज़रों से देख रही थी सुजाता।

व्रती, जिसके ख़ून में उसका ख़ून मिला हुआ था, जिसको दुनिया में लाने के लिए उसे अपने जीवन को संकट में डालना पड़ा था, जो धीरे-धीरे उसके लिए अजनबी, अनजाना बनता जा रहा था, उस व्रती के साथ सुजाता का जैसे नया परिचय हो रहा हो।

सपने में तो वह कितनी बार व्रती को देखती है—नीली कमीज़ पहने

हुए, बाल सँवारता हुआ उसकी तरफ़ टकटकी लगाकर देख रहा है, बड़े ध्यान से। कितनी रातों में जब नींद नहीं आती और रात के आख़िरी पहर में नींद पलकों को भारी कर देती है, तब व्रती सीढ़ियों के नीचे से उसे ताकता रहता है। सुजाता कहती है : 'व्रती, तू कहीं मत जा।' वह ताकता रहता है। सुजाता कहती है : 'आ व्रती, ऊपर आ जा।' व्रती टुकुर-टुकुर ताकता रहता है। बोलता नहीं है, और न ही हँसता है।

लेकिन यहाँ व्रती बोलता था, हँसता था, कहता था, 'मौसी, चाय बनाओ, पानी दो पहले।'

समु की माँ ने कहा था : 'हम कहत रहे, तुम काहे अइसन अपन सब-कुछ लुटा रहे बिटवा, का नहीं है तुम्हार पास ! इत्ते बड़े बाप, इत्ती पढ़ी अम्मा। ऊ चुपचाप हँसत रहा, बोलत नहीं रहा कछु, बस हँसत रहा। ऊ की हँसी हमार आँखन के आगे टँगी है, दिदिया !'

तभी सुजाता को धक्का पहुँचा था। व्रती की हँसी, वह निश्छल-सी हँसी ! उसने सोचा था, सब स्मृतियाँ सिर्फ़ उसकी हैं, उस अकेली की। व्रती समु की माँ के दिल में भी स्मृतियों का अम्बार छोड़ गया है—यह उसे पता नहीं था।

व्रती उस दिन घर पर ही था। सारा दिन जाने क्या-क्या लिखता रहा था तिमंज़िले पर बैठ कर। बाद में सुजाता ने देखे थे दीवारों पर लिखे जाने वाले नारों के मज़मून। वे सब कागज़ात घर की तलाशी लेते वक़्त ले गये थे। अब कुछ नहीं बचा है।

अब घर में हैं—व्रती की स्कूल-कॉलेज की कापियाँ-किताबें, इनाम में मिलीं किताबें, मैडल, दार्जिलिंग में दोस्तों के साथ खींची गयीं तसवीरें, दौड़ने के कपड़े के जूतें, जीते हुए कप। व्रती के जीवन के कुछ सालों की यादगार। सब याद है सुजाता को : 'माँ, मुझे इनाम मिलेगा, तुम नहीं चलोगी मेरे साथ ?' मुहल्ले के बाल-संघ में जाकर व्रती का सदस्य बनना। 15 अगस्त को शान से लड़कों के साथ बैंड की आवाज़ के साथ मार्च करते-करते आगे जाना। फुटबाल के मैच में इनाम जीतकर भी पैर तोड़कर आना—

सब याद है।

जिस समय से वह बदलना शुरू हुआ था, उस साल की किताबें, इश्तहार, क्रान्ति का आह्वान लिखे कागज़, पत्रिकाएँ—कुछ भी अब घर में नहीं हैं। सब झाड़-पोंछकर ले जाये गये हैं। सुजाता ने सुना है कि उन सबको जला दिया गया है।

उस दिन सारे दिन घर पर ही था व्रती। बैंक से लौटकर उसे घर पर देख सुजाता हैरान हो गयी थी। बाद में पता चला था, सारा दिन वह एक टेलीफ़ोन का इंतज़ार करता रहा था। उसे यही पता था कि समु और दूसरे लोग लौट जायेंगे; उनको और कहीं जाने के लिए मना कर दिया गया है। लेकिन जिसको मना करने के लिए भेजा है वह धोखा देगा, समु को मना करने के बदले महल्ले में ख़बर कर देगा, यह उसे पता नहीं था। फ़ोन आया था तो समझा था कि सर्वनाश हो गया !

ऐसे ही मरे थे वे लोग। बहुत लोगों पर विश्वास करना ही काल सिद्ध हुआ। जिन पर विश्वास किया था उन युवकों के लिए नौकरी, सुरक्षा, सुखी जीवन का लोभ बड़ा होगा—यह व्रती जैसे तरुणों की समझ में नहीं आया था। वे यह भी नहीं समझे थे कि पहले से ही उनकी योजनाओं को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिए ही कुछ लोग दल में घुस आये थे। व्रती की उमर कम थी। एक विश्वास, एक आस्था ने उन लोगों को अंधा कर दिया था—उनकी समझ में यह नहीं आया था कि जिस व्यवस्था से उनकी लड़ाई है, वह व्यवस्था जन्मने से पहले ही कुछ को भ्रूणावस्था में ही ज़हरीला बना देती है। सब तरुणों को ही आदर्श की दीक्षा नहीं मिलती; सभी ऐसे नहीं हैं जो मौत से नहीं डरते—ये सब बातें व्रती जैसे लोग नहीं जानते थे। इसीलिए व्रती ने सोचा था कि ख़बर भेज दी गयी है, समु और बाक़ी साथी सचेत हो जायेंगे। टेलीफ़ोन से ख़बर आयेगी कि सब ठीक है।

जब पूरा दिन बीत गया, शाम हो गयी—जाड़ों की शाम कलकत्ता में ज़रा पहले ही उतर जाती है—तब शायद व्रती ने सोचा था, ख़बर आनी होती तो आ जाती अब तक। दोपहर तक जब फ़ोन नहीं आया तो उसे बेचैनी हुई। दोपहर ढल गयी; शाम हुई; सुजाता लौट आयी।

'क्यों रे, आज बाहर नहीं गया ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'क्यों क्या, ऐसे ही। चलो न, चाय पी जाये।'

एक साथ चाय पी दोनों ने। व्रती बैठा था, दरवाज़े की तरफ़ उसकी पीठ थी। एक पुराना शाल ओढ़े था। नीला-सा रंग और पूरे शाल में छेद-ही-छेद ! जाड़ों में वही शाल लपेटे रहता था व्रती, घर में। सुजाता कहती थी : 'अब इसे उतार फेंक न, दूसरा शाल ले ले।'

व्रती कहता था : 'हेम कहती है, बड़ी गुनगुनी गर्मी लगती है इससे।'

वही शाल ओढ़े, बग़ैर सँवारे बाल, व्रती के पीछे का खुला हुआ दरवाज़ा। खुले दरवाज़े से आँगन के पार वाली दीवार दीखती है। दीवार के नीचे नल और माँजने के लिए पड़े बर्तन।

चाय पीते वक़्त बहुत दिन बाद व्रती बिनी के साथ चुहल कर रहा था। व्रती कुछ दिन पहले दोस्तों के साथ दीघा गया था। बाद में सुजाता को पता चला, वह दीघा नहीं गया था। यह पता भी चला कि खड़गपुर के स्टेशन पर ही पुलिस की भीड़ जमा थी। दीघा के रास्ते पर बस रोककर हैलमेट पहने पुलिस बस पर चढ़ रही थी; टॉर्च से मुसाफ़िरों के चेहरे देख रही थी। किसी-किसी गाँव के सामने से बस धीरे-धीरे गुज़रने को मजबूर हो जाती है। रास्ते के दोनों तरफ़ गहरा अँधेरा। अँधेरे में संगीनें उठाये सिपाही खड़े थे। व्रती दीघा नहीं गया था।

सुजाता तब तक यह सब नहीं जानती थी, बिनी भी नहीं। बिनी उससे दीघा के बारे में बातें पूछ रही थी।

व्रती ने कहा, 'दीघा बेकार की जगह है, न कुछ खाने को मिलता है, न रहने का कोई बंदोबस्त है !'

बिनी ने कहा, 'चलो भी ! मेरी मौसेरी बहन गयी थी, उसने तो ऐसा कुछ भी नहीं कहा !'

'तुम्हारी ही बहन है न ?'

'अच्छा, और तुम्हारी कुछ नहीं। तुम्हारे दिली दोस्त दीपक के साथ वह टेनिस खेलती है, यह तुम्हें पता है? दीपक के साथ गप्पें मारने रोज़ ही तो जाते हो वहाँ!'

'इसका मतलब यह थोड़े ही है कि मैं तुम्हारी वहन को जानता-पहचानता हूँ।'

सुजाता ने कहा, 'पहचानता नहीं तो क्या? देखा तो होगा!'

'क्यों, देखूंगा क्यों?'

'वहुत सुन्दर है वह।'

'तुम से भी ज़्यादा?'

बिनी से झट से कहा, 'माँ, व्रती तुम्हारी चापलूसी कर रहा है। इसे ज़रूर कोई काम निकालना होगा।'

'क्या कहती है, विनी? अव उसे क्या ज़रूरत है? न तो सिनेमा के लिए रुपये चाहिए होते हैं, न जेब-ख़रच। माँ को खुश करने की इसे ज़रूरत ही कहाँ रही है! माँ की भी कोई ज़रूरत नहीं रही।'

'यह क्या कहा, माँ?'

विनी ने कहा, 'तुम भी खूब बुद्धू हो, माँ! मैं तुम्हारी जगह होती तो इसके नेशनल स्कॉलरशिप के पैसे हथिया लेती।'

'इतना आसान नहीं है भाभी, भैया से पूछो न!'

'क्यों, भैया से पूछने की क्या बात है?'

'भैया हमेशा के बुद्धू थे; जेव-ख़रच के सारे पैसे खर्च कर डालते थे। फिर मैं, जनेऊ के समय मिले रुपयों से उनको उधार देता था, लेकिन एक रुपये पर एक रुपया सूद लेता था!'

सुजाता को लगा था, व्रती बात को टाल रहा है। उन्होंने फिर पूछा था: 'माँ की ज़रूरत पड़ती है तुझे कभी? कभी पूछता है मुझे कि कैसी हूँ? दिन नहीं, रात नहीं—जब देखो तब बाहर निकल जाता है। कहता है, काम है।'

'काम जो होता है।'

'वाप रे वाप, अभी से इतना काम! जब अपने भैया की तरह कोई

सीरियस काम करोगे तब क्या होगा ?'

व्रती ने कहा था, 'मैं सीरियस काम नहीं करता, यह तुम्हें किसने कहा ?'

'सीरियस काम है दोस्तों के साथ गप्पें मारना ?'

'गप्पें मारना सीरियस काम नहीं है ?'

'मुझे पता है भैया, सब पता है।'

'क्या पता है ?'

'नंदिनी के साथ गप्पें मारना सबसे सीरियस काम है !'

'नंदिनी के साथ गप्पें मारता हूँ, यह तुम्हें किसने बतलाया ?'

'इसमें बतलाने की क्या बात है ? मैं नंदिनी का फ़ोन नहीं उठाती कभी-कभार ?'

व्रती चुपचाप हँसता रहा था। ऐसे ही बिना आवाज़ के हँसता था वह। उसकी सिर्फ़ आँखें हँसती रहती थीं और चेहरे पर चमक आ जाती थी। ऐसे ही हँसकर जवाब देने की ज़िम्मेदारी को वह हमेशा टाल देता था।

'चलो माँ, ऊपर चलकर लूडो खेलते हैं।'

विनी ने फिर कहा था : 'माँ, आज ज़रूर कोई मतलब गाँठना है इसे।'

'तुम भी चलो न !'

'न बाबा, तुली के साथ कहीं जाना है। नहीं तो उसका मिज़ाज बिगड़ जायेगा।'

'मन नहीं होता तो जाती क्यों हो ?' व्रती ने धीमे से कहा था।

सुजाता और व्रती ऊपर लूडो खेल रहे थे। खेलते-खेलते सुजाता ने पूछा था : 'व्रती, नंदिनी कौन है रे ?'

'एक लड़की।'

'मुझसे एक दिन मिलायेगा ?'

'चाहोगी तो मिलाऊँगा।'

'चाह तो रही हूँ।'

'देखोगी तो नाराज़ हो जाओगी।'
'क्यों ?'
'बहुत साधारण है देखने में।'
'तो क्या हुआ ?'
'बॉस को पसन्द नहीं आयेगी !'

बाप को व्रती पीठ-पीछे 'बॉस' कहता था। होश आने के बाद अपने पिताजी के मुँह से—'मैं इस घर का बॉस हूँ, मैं जो कहूँ वही होगा'—यह वाक्य व्रती ने लाखों बार सुना था।

'न आये।'
'माँ, तुम्हें मालूम है, बॉस रोज़ पाँच बजे के बाद कहाँ जाते हैं ?'
अचानक सुजाता को लगा कि व्रती दिव्यनाथ के साथ टाइपिस्ट लड़की के हेलमेल की बात जानता है।

'अचानक यह क्यों पूछ रहा है, व्रती ?'
'ऐसे ही। तुम जानती हो ?'
'रहने दे यह सब बातें, व्रती।'
व्रती थोड़ी देर ध्यान से खेलता रहा था, फिर उसने कहा था : 'माँ, मुझको लेकर तुम्हारे मन में बड़ा दुःख है न ?'
'कैसा दुःख रे ?'
'बताओ न ?'
'कोई दुःख नहीं है, व्रती।'
'बीच-बीच में मुझे लगता है, शायद है। भैया, दीदी, छोटी दीदी—इनसे तुम्हें कोई परेशानी नहीं है।'
सुजाता चुप रही थी। मन रखने के लिए उससे कभी झूठ नहीं बोला गया।
'क्यों, कुछ बोल नहीं रही हो ?'
'दुःख होना किसे कहते हैं ?'

'दुःखी होओ तो उसे दुःख होना कहते हैं।'

'सब लोग क्या मेरे मन-माफ़िक हो सकते हैं? सभी लोग अपनी-अपनी तरह ही हुए हैं। वे सुखी रहें, इसी में मेरा सुख है।'

'वे लोग क्या सचमुच सुखी हैं?'

'कहते तो हैं।'

'आश्चर्य है।'

'कैसा आश्चर्य ?'

'माँ, तुम इतना सब सहन कैसे करती हो?'

'सहने के अलावा चारा ही क्या है? बच्चों के बारे में मुझे हमेशा सहनशील बना कर रखा गया था। तेरे पिताजी और तेरी दादीजी...।'

पहले तीनों बच्चों पर सुजाता को कोई हक़ नहीं जतलाने दिया गया था। दिव्यनाथ ने सारे अधिकार अपनी माँ को दे रखे थे। पत्नी को छोटा न करके भी माँ को सम्मान दिया जा सकता है, यह दिव्यनाथ को नहीं मालूम था। माँ को सिर पर और पत्नी को पैरों के नीचे रखना—यही उनकी नीति, उनके यहाँ का रिवाज था।

सुजाता का आत्म-सम्मान और मान भी कम नहीं था। शादी के बाद ही उसे अहसास हो गया था कि अपने को जितना दबा-छुपा के रखा जायेगा, औरों को उतना ही सुख मिलेगा। 'औरों' में आते थे दिव्यनाथ और उनकी माँ। ज्योति, नीपा, तुली; तीनों ने ही माँ को—अपनी माँ को बहुत ही गौण भूमिका निभाते देखा था। उसकी उपेक्षा करके ही वे बड़े हुए हैं। इसीलिए धीरे-धीरे वे भी अब 'औरों' के गुट में चले गये हैं।

सुजाता के मन की गहराई में पैठी इस व्यथा की जानकारी दिव्यनाथ को नहीं थी। पत्नी से ज़रूरत से ज़्यादा आसक्ति या अनासक्ति—दोनों में से कोई भी उसमें नहीं थी। पत्नी पति को प्यार करती है, उसकी श्रद्धा करती है, उसे मान देती है—यह स्वाभाविक नियम है। लेकिन पति को पत्नी से यह सब पाने के लिए कोई कोशिश नहीं करनी पड़ती। दिव्यनाथ सोचते थे कि मकान बनवाया, नौकर-चाकर रख दिये, तो सब फ़र्ज़ अदा

हो गये। घर से बाहर लड़कियों से मौज-मज़े उड़ाने की वात को कभी छुपाने की भी कोशिश नहीं की उन्होंने। उनकी धारणा थी कि यह सव उनका अधिकार है।

लेकिन इसका मतलव यह नहीं कि वह समझदार नहीं थे। फ़र्म की हालत सुधरते ही उन्होंने सुजाता को नौकरी छोड़ देने के लिए कहा था।

सुजाता ने नौकरी नहीं छोड़ी—यह उसका दूसरा विद्रोह था।

दिव्यनाथ जानते थे कि वच्चों को उनके विवाहेतर सम्वन्धों के वारे में पता है। लेकिन उनको इसमें कोई शर्म नहीं महसूस होती थी, क्योंकि उनके पहले तीनों वच्चे उनको स्वीकार करते और उनके सव आचरणों को पुरुषोचित मानते थे।

उन्होंने ज्योति से कहा था : 'तुम्हारी माँ, ए विट पज़लिंग[1]; नौकरी क्यों नहीं छोड़ रही ? वह तो इचिंग फ़ॉर इंडिपेंडेंस टाइप की वुमेन[2] नहीं है। फ़ैशन-परस्त, नौकरी-पेशा औरतों की तरह भी नहीं है, तो फिर नौकरी क्यों करते रहना चाहती है ? आश्चर्य है !'

'तुमने माँ को कहा है ?' ज्योति ने पूछा था।

'हाँ कहा, अव और काम की ज़रूरत नहीं है। अव घर-गृहस्थी देखो। माँ भी गुजर गयीं। तो कहने लगी, जव वच्चे छोटे-छोटे थे, घर-गृहस्थी को देखने की सचमुच जरूरत थी, तब भी मेरी कोई ज़रूरत नहीं थी; मुझे कोई ज़िम्मेदारी नहीं सौंपी गयी थी। अव वच्चे वड़े हो गये हैं, घर नियम से चल रहा है, अव तो मेरी ज़रूरत और भी कम हो गयी है।'

सुजाता को दिव्यनाथ कभी नहीं समझ पाये थे। उग्र स्वभाव की स्वतंत्रता-प्रिय महिला वह थी नहीं, इसके अलावा ऐसी फ़ैशनेवल औरतों में भी उसे शामिल नहीं किया जा सकता था जो कार में वैठ सारा कलकत्ता छान मारा करती हैं !

सुजाता शान्त स्वभाव की, कम वोलने वाली, पुराने फ़ैशन का

---

1. कुछ समझ में नहीं आती।
2. आजादी के लिए आतुर स्त्री।

पहनावा पहनने वाली है। घर की कार पर कहीं नहीं जाती। ट्राम से बैंक जाती है और घर वापस आती है। घर से बाहर ज़्यादा नहीं जाती। रिश्तेदार, मित्र, पड़ोसियों में ज़्यादा उठती-बैठती नहीं। घर लौटकर किताब पढ़ती है, फिर गमलों में पानी डालती है, छोटा लड़का घर पर हो तो उससे थोड़ी-बहुत बातचीत करती है।

नौकरी न छोड़ना सुजाता का दूसरा विद्रोह है। पहला विद्रोह उसने तब किया जब व्रती दो साल का था। दिव्यनाथ उन्हें पाँचवीं बार माँ बनने को किसी भी तरह राज़ी न कर पाये थे।

दिव्यनाथ बेहद नाराज़ हुए थे। उन्होंने कहा था : 'शादी करने के बाद पति-पत्नी दोनों का एक-दूसरे के प्रति एक कर्तव्य होता है। तुम्हें एतराज़ क्या है ?'

'नहीं।' सुजाता राज़ी नहीं हुई थी।

'तुम मुझे डिनाई कर रही हो[1]।'

'तुम अपने फ़ुलफ़िलमेंट[2] के लिए सिर्फ़ मुझ पर ही तो कभी निर्भर नहीं रहे !'

'कहना क्या चाहती हो ?'

'जो कहना चाहती हूँ, वह मैं भी जानती हूँ और तुम भी जानते हो।'

पहले भी, जब सुजाता लगातार माँ बनती रही थी, तब भी दिव्यनाथ दूसरी स्त्रियों से साहचर्य करते रहते थे। अब इसे और भी बढ़ा दिया। लेकिन अगर इसको उन्होंने सुजाता को फाँसने के लिए जाल बनाना चाहा तो सुजाता सावधानी से बचकर निकल गयी।

व्रती के मरने से एक दिन पहले उसके साथ बातें करते-करते सुजाता ने यह सब-कुछ नहीं कहा। अब लगता है—वह जानता था, सब-कुछ जानता

---

1. नकार रही हो।
2. संतोष-सुख के लिए।

था, समझता था, इसलिए शायद हर समय माँ पर नज़र रखता था।

सुजाता की तबीयत ख़राब होती तो दस साल का व्रती खेल छोड़कर घर आ ज़ाता था। कहता था : 'माँ, पंखे से हवा करूँ ?'

दिव्यनाथ कहते थे : 'मिल्क सॉप ![1] लड़कियों जैसा लड़का, नो मैन्लिनैस[2] !'

व्रती यह प्रमाणित कर गया कि वह किस मसाले का बना था। कितनी शक्ति, कितना साहस था उसमें !

उस दिन व्रती उसकी तरफ़ टकटकी लगाये बहुत देर तक देखता रहा था, फिर उसने कहा था : 'खेल रहने दो, चलो न, आज बातें करते हैं।'

'ठहर, क्या खाना बनेगा—बता कर आती हूँ।'

'छोटी दीदी नहीं हैं घर में ?'

'नहीं, वह टोनी की प्रदर्शनी में लगी है, बस सिर्फ़ एक बार बिनी को लेने आयेगी।'

'अच्छा, यह बात है !'

'कल क्या खायेगा, बोल ?'

'कल क्या ख़ास बात है ?

'कल तेरा जन्मदिन है न ?'

'बाप रे, यह जन्मदिन वग़ैरह तुम्हें भी याद रहता है ?'

'नहीं रहता ?'

'मुझे तो नहीं रहता।'

'मैं कभी भूल सकती हूँ ?'

'कल तुम ज़रूर खीर बनाओगी।'

'हाँ, आजकल तो सिर्फ़ खीर ही बना पाती हूँ।'

'ठहरो, सोचता हूँ, और क्या खाना चाहिए।'

---

1. दुधमुंहा बच्चा !
2. पौरुष-हीन।

'मांस खाने को न कहना।'

'क्यों, 'वॉस' घर पर खा रहे हैं ?'

'हाँ !'

'तो फिर वनाओ जो मरज़ी।'

सुजाता नीचे जा रही थी। इतने में फ़ोन की घंटी वजी। व्रती फ़ोन उठा रहा है, देखकर वह नीचे चली गयी।

वह ऊपर आयी, देखा—व्रती पैंट और नीली कमीज़ पहनकर वाल वना रहा है।

'क्या हुआ ?'

'ज़रा वाहर जाना है, कुछेक रुपये दो तो ?'

'कहाँ जा रहा है ?'

'काम है थोड़ा। रुपये दे दो।'

'यह ले। लौटेगा कव ?'

'लौटूंगा, लौटूंगा, ठहरो तो।'

पैंट की जेव में हाथ डालकर व्रती ने देख लिया, क्या-क्या है। एक चिट को टुकड़े-टुकड़े कर फाड़ दिया।

'किस तरफ़ जा रहा है ?'

विना किसी ख़ास आशंका से सुजाता ने यह प्रश्न पूछा था, क्योंकि उस समय कलकत्ता में एक विशेष स्थिति चल रही थी। वूढ़े, प्रौढ़, चालीस के पार लोग कहीं भी जा सकते थे, लेकिन तरुण किशोरों के लिए कलकत्ता की वहुत-सी जगहें निषिद्ध और खतरनाक सिद्ध होने लगी थीं।

उस समय, उन ढाई सालों में क्या-क्या घटित हुआ करता था या नहीं हुआ करता था, पुराने अखवारों को उलटते-पलटते समय जान कर सुजाता हैरान रह जाती है।

उस समय उनको हर समय यह महसूस होता था, सव-कुछ जैसे उलटा-सीधा हो रहा है। व्रती के ज़िन्दा रहते सुजाता को यह मालूम तक न था कि व्रती भी कठोरतम सज़ा से दंडनीय अपराधियों के दल में शामिल है।

तब भी रोज़ अख़बार में हरेक ऐसी अजीब घटना को पढ़कर काँप जाती थी सुजाता।

उन दिनों उनके घर में कोई अखबार पलटकर ही न देखता था। सब कहते थे : 'क्या करना है देखकर ! अखबार खोलते ही यह पढ़ना होगा, कि कितने लोग कहाँ मरे हैं, और उनकी मौत का वीभत्स वृत्तांत।' यह सब देख कर ही सबको बुरा लगता था—इसलिए सुजाता और व्रती के सिवाय कोई अखबार खोलता भी नहीं था।

सुजाता अखबार देखती थी; चौंक जाती थी। लेकिन पता नहीं क्यों उसे लगता था : 'कलकत्ता इज़ ए रौंग सिटी।'[1] लगता था—वही मैदान, विक्टोरिया मेमोरियल, मेट्रो, गांधीजी की मूर्ति, मॉनुमेंट्स—सभी कुछ हैं, लेकिन फिर भी यह कलकत्ता नहीं है। इस कलकत्ता को न वह जानती है, न पहचानती है।

बहुत दिन बाद पुराने अखबारों को ढूँढ़-ढाँढ़ कर पढ़ा था कि जिस दिन सुबह उनके घर टेलीफ़ोन की घंटी बजी थी, उस दिन भी बाज़ार में सोने का भाव चढ़ा था; बैंकों के ज़रिये कई करोड़ रुपयों का लेन-देन हुआ था, प्रधानमंत्री की शुभेच्छाओं को लेकर हिन्दुस्तान के एक हाथी का बच्चा दमदम से टोकियो उड़ गया था; कलकत्ता में विदेशी फ़िल्मों का उत्सव हो रहा था; सचेत शहर कलकत्ता के सचेत और संघर्षरत कलाकार और बुद्धिजीवियों ने वियतनाम में होने वाली बर्बरता के विरोध में रेड रोड पर अमेरिकन कॉन्सुलेट और सुरेन्द्र बैनर्जी रोड पर प्रदर्शन का जुलूस निकाला था !

सब-कुछ घट रहा था कलकत्ता के तापमान यंत्र में—जो-जो स्वाभाविक व प्राकृतिक है—वह सब-कुछ, जिसके लिए कलकत्ता विवेकशील शहरों में अन्यतम माना जाता है !

इन सबसे यही समझा जाता है कि कलकत्ता उस दिन भी स्वाभाविक था। सिर्फ़ व्रती भवानीपुर से दक्षिण जादवपुर नहीं जा पा रहा था; बारासत के आठ लड़के पहले गले में डाले गये फंदों से घुटकर बेहोश हुए और फिर

---

1. कलकत्ता बड़ा गड़बड़ शहर है।

गोलियों के लगने से लाशें बने बगैर कहीं आ-जा नहीं पा रहे थे। पूर्वी कलकत्ता में, बचपन से महल्ले में साथ खेलने वाले एक लड़के की खून से लथपथ लाश को रिक्शे में डालकर दूसरे लड़के तासा, नगाड़ा बजाकर नाचते हुए पूजा की प्रतिमा-विसर्जन के जुलूस के साथ-साथ जा रहे थे !

नैतिकता और सद्विवेक में अग्रणी संघर्षरत नागरिकों के लिए यह सब-कुछ भी अस्वाभाविक नहीं था !

कलकत्ता के लेखक, कलाकार, बुद्धिजीवियों ने इस दिन के ठीक एक साल तीन महीने के अंतराल के बाद बंगला देश की सहायता और समर्थन के लिए पूरे पश्चिम बंगाल में उथल-पुथल मचा दी थी। अवश्य ही वे लोग सही-सही सोच रहे थे, और सुजाता जैसी माताएँ ग़लत ढंग से सोच रही थीं ! पश्चिम बंगाल के तरुण एक महल्ले से दूसरे महल्ले में नहीं जा सकते—इस स्थिति पर जब उनका विवेक उन्हें ज़रा भी कष्ट नहीं पहुँचाता, तब अवश्य ही वे ही ठीक होंगे !

पश्चिम बंगाल के तरुण किशोरों का जीवन संकट में है, यह कोई ऐसी गंभीर घटना नहीं है। अगर होती तो क्या जुलूसों के शहर इस कलकत्ता में संघर्ष के समर्थक कलाकार, साहित्यिक और बुद्धिजीवी लोग इस सब-कुछ को लिखने के लिए अपनी क़लम नहीं उठाते ?

समु की देह पर तेईस घाव थे और विजित के शरीर पर सोलह। लालटू की नाभि और आँतों को खींच-निकाल कर लालटू के शरीर पर लपेट दिया गया था ! इसमें ज़रूर ही कोई पाशविकता, कोई पैशाचिकता नहीं थी न ?

अगर होती तब तो कलकत्ता के कवि और लेखक उस पार के बंगाल में होने वाली पाशविकता के साथ-साथ इस बंगाल में होने वाली पाशविकता का वर्णन भी करते, कुछ कहते। और जब उन लोगों ने नहीं कहा, जब कलकत्ता में होने वाली रोज़मर्रा की इस खून की होली को अनदेखा कर कवियों और लेखकों ने सिर्फ़ दूसरे बंगाल के मृत्यु-युद्ध की बातें ही लिखीं तब उन्हीं लोगों का दृष्टिकोण ठीक रहा होगा, है न ? सुजाता का नज़रिया अवश्य ही ग़लत है, अवश्य ही।

कवि, लेखक, बुद्धिजीवी, कलाकार—ये लोग तो समाज के विशिष्ट

सम्मानित सदस्य हैं, समाज के स्वीकृति-प्राप्त प्रवक्ता, देश के अंत:करण की आवाज़ !

सुजाता कौन है ? वह तो सिर्फ़ एक माँ है। जिन हज़ारों हृदयों को यह प्रश्न आज कुतर-कुतर के खा रहा है, वे लोग तो सिर्फ़ माँ ही हैं।

व्रती जब नीली कमीज़ पहने अपनी हमेशा की आदत के अनुसार दोनों हथेलियों से बालों को सँवारते हुए बाहर जा रहा था, तब सुजाता ने पूछा था : 'कहाँ जा रहा है ?'

व्रती एक पल ठिठक कर खड़ा हो गया था। फिर हँसकर बोला था : 'अलीपुर। अगर देर हो जाये तो समझना, रनु और उसके संगियों के घर रुक गया हूँ, चिन्ता मत करना।'

व्रती को तभी पता लग गया था कि भयंकर विपदा आ पड़ी है। जिसको खबर पहुँचाने को कहा गया था वह समु वग़ैरह को ख़बर नहीं पहुँचा सका। कोई ख़बर न पाकर समु आदि लोग पहले की योजना के अनुसार महल्ले में लौट गये हैं। व्रती को तब भी यह मालूम नहीं था कि जिस लड़के ने समु को ख़बर नहीं दी, उसी ने महल्ले में ख़बर कर दी कि समु और उसके साथी महल्ले में वापस आ रहे हैं। इसीलिए व्रती ने सोचा था— रातों-रात समु आदि को सावधान रहने को कहकर किसी तरह महल्ले से निकाल कर ले आये। हालाँकि उसे उम्मीद कम ही थी, लेकिन सोचा था, शायद कामयाब हो ही जाये। फिर भी इतने सहज स्वर में उसने कहा था, 'चिन्ता न करना', कि सुजाता निश्चिंत हो ही गयी थी।

रनु के घर जाना बिलकुल खतरे से बाहर है।

मिली मित्रा और जीसू मित्रा के लड़के रनु मित्रा का घर बहुत सुरक्षित है। रनु और व्रती कॉलेज में एक साथ नहीं पढ़े, लेकिन स्कूल में एक साथ पढ़े थे। रनु अपने समाज में 'विद्रोही' के नाम से परिचित है। विद्यार्थी-जीवन से वह पॉप-गायकों के साथ कैबरे में गाना गाता है; 'विद्रोही' रनु को समाज पर कोई आस्था नहीं है। इसीलिए वह फिरंगियों के साथ मारिजुआना पीता है—फिर भी रनु सुरक्षित है, ख़तरे से बाहर है। रनु के साथ रात बिताने से व्रती पर कोई विपत्ति नहीं आयेगी।

सुजाता ने कहा था : 'हेम से कहना—दरवाज़ा बन्द कर दे, कह देना ज़रूर।'

'कह दूँगा।'

सीढ़ियों से नीचे उतरते-उतरते व्रती अचानक ठिठक गया था। उसके ठिठकने को भाँप कर सुजाता ने नज़रें उठायीं; वह भी बरामदे में निकल आयी थी। उसने देखा—व्रती उसकी ओर टकटकी बाँधे, बड़े ध्यान से देख रहा है।

'माँ का मन-वन'—यह सब बकवास है! क्यों? उस समय कोई भी आशंका तो उसके मन में नहीं हुई थी। कहते हैं, माँ का मन आने वाले संकट को पहले से ही भाँप लेता है। यही अगर सच होता तब उसी समय सुजाता का मन आशंका से भर जाना चाहिए था। लेकिन नहीं; कुछ नहीं हुआ था, कुछ भी तो नहीं!

बाद में सुजाता को पता लगा था कि डेढ़ साल हो गया, रनु के साथ व्रती की मेल-मुलाक़ात नहीं है, यहाँ तक कि ऐसा कोई दोस्त भी नहीं है जो दोनों का साझा मित्र हो। व्रती ने उससे ग़लत कहा था।

नींद में सुजाता की देह सोयी रहती, लेकिन चेतना जगी रहती है—और भी तीव्र हो जाती है। स्वप्न में कितनी बार सुजाता सीढ़ियों में खड़ी रहती है और व्रती नीचे; स्वप्न में सुजाता को पता रहता है कि व्रती रनु के घर नहीं जायेगा, समु आदि लोगों को बचाने जायेगा। इसीलिए व्याकुल होकर उसे बचाने को दौड़कर जाना चाहती है; हाथ पकड़कर, खींचकर वापस लाना चाहती है व्रती को, कहना चाहती है : 'व्रती, लौट आ।'

पर कुछ बोल नहीं पाती सुजाता। सपने में उसके पैर पत्थर हो जाते हैं। व्रती उसको देखता रहता है, इन्तज़ार करता रहता है, फिर जब व्रती के गले, पेट और छाती पर, नीली कमीज़ के ऊपर तीन गोल निशान उभर उठते हैं, चेहरा बदलने लगता है, सिर के पीछे से गरदन पर छुरे के निशान स्पष्ट होकर दीखने लगते हैं तब सुजाता की नींद टूट जाती है, और जैसे ही नींद टूटती है वैसे ही वही पहेली, वही विचित्र भ्रम उसे घेर लेता है कि

अभी-अभी व्रती जैसे यहीं था, अभी बाहर चला गया है !

नहीं, उसके जाते समय कोई सन्देह, कोई आशंका उसे नहीं हुई थी। उस रात को भी उसने दिव्यनाथ को हाज़मे की दवा दी थी। सुमन रो उठा था तो उसे बाहर लाकर चुप कराया था, हेम को याद दिलाया था कि कल व्रती का जन्मदिन है, एक लिटर दूध ज़्यादा लाना है, भूल न जाये, खीर बनेगी।

बहुत स्वाभाविक, रोज़मर्रा की घटनाएँ !

सुजाता को क्या पता था कि रात के बारह बजते-न-बजते समु आदि युवकों के घर के सामने भीड़ इकट्ठी हो गयी थी? महल्ले के बड़े-बड़े बुज़ुर्गों ने चीख़-चीख़कर कहा था : 'निकाल दीजिये उन लोगों को।'

पहली बार जब समु की माँ के पास जाकर खड़ी हुई थी, उसके कमरे में बैठी थी तब उसे लगा था कि यह एक सहज परिवार है; इस परिवार के लोगों की मानसिक प्रतिक्रिया भी सहज है।

सुजाता समझती है—उसकी शिक्षा के कारण विचारों को शब्दों में प्रगट करने की क्षमता उसमें है इसीलिए वह जो कुछ सोचती है, समु की माँ अपनी कम शिक्षा, साधारण विद्या-बुद्धि से विचारों को शब्दों में चाहे न प्रगट कर सके, लेकिन सोचती वह ठीक उन्हीं की तरह है।

जो बात उसके मन में आ रही थी, वही बात कहते हुए समु की माँ ज़ोर-से रो उठी थी : 'काहे मार दिहिस ऊ लोगन को दिदिया, लँगड़ा-लूला करके भी जिन्दा छोड़ देत त का बिगड़ जात ? हम जानत कि हमार समु ज़िन्दा हय। अँखियन का सामने न रहत त जेहल मा ही रख देत तब भी हम जानत कि हमार बिटवा ज़िन्दा त हय। हम कउन जुरम किहिस, दिदिया ?'

समु की दीदी ने कहा था : 'हे माई, रोवो जिनि, ऊ तुहार छाती मा लात मारे के चला गवा, अब ना लउटब। हम लोगन का सोच कर हिम्मत धरो।'

'हम अपन मन का समझात है, पर मन नाहीं मानत।'

'रो-रो के जिन्दगी खतम करै का फायदा ?'

'तू लोगन ठीक ई कहिस। हम जनम-दुखिया, अभागी, हमार दुख मा

सियार-कुत्ते रोअत हैं। कब जने बापू वियाह दिया रहा! समु का बापू भी पढ़ा-लिखा ना रहा। वड़का रहा। देस मा तब भी खेत रहे धान के। हियाँ त कछु नाहीं रहिल, दिदिया। वेइमानी का धंधा करिकै पइसा कमावै का आदमी न रहि ऊ। हुआँ का दुख हियाँ आय गवा हमार साथ।'

सुजाता समु की माँ की एक-एक बात समझ रही थी।

'हियाँ लड़की-लड़कन सबै लिखा-पढ़ी सीखत हैं। आजकल ऊ के बिना काम न चलत, दिदिया। त समु का कउनो खरचा ना लगल वा। साले-साल वजीफा लेत रहा। वजीफा लेत रहा तब्भी ना ऊ कालिज मा दाखिला लिहिस। जाने कउन लोगन ऊ का ऊ रास्ता मा खींच लिहिस। कउन लोगन ऊ का मरना सिखाइस! कत्ती वार हम कहा: 'समु रे, तू का करत हो बिटवा, कहाँ जावत हो वाहर?' बिटवा कहै रहा: 'माई, काहे डरत हो, हम खराव काम नाहीं करत हैं।' तब हम नाहीं समझै रहै।'

समु की दीदी ने पूछा, 'मौसी, चाय पियेंगी?'

'दो, थोड़ी-सी।'

समु की माँ ने कहा था: 'ई लड़की कालिज छोड़ दिहिस, टूसन पढ़ावत है, अउर टैप सीखत है। छुटकी का ऊ की मउसी लेय गयी रहिन। तब भी अऊर दू जनी हय न, एक्को टूसन चार पेट भरै का काफी न होत, दिदिया।'

समु की बड़ी वहन चाय ले आयी। ऐसे कप में सुजाता ने पहले कभी चाय नहीं पी थी।

'सब्बई हमार भाग रहा। नाहीं त बिटवा जवान होब पढ़ाई करे के वाद पइसा कमाव, माई-वाप का खिलाव, बहिनी का बियाह करब, ई ही होत हय। अब हमार बिटिया क हाथ पीला होब का कबहूँ?'

'ऐसा मत सोचिये, धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। एक दिन जरूर इसकी शादी भी हो जायेगी।'

यह सुजाता ने बड़े अपनेपन से ही कहा था। लेकिन समु की माँ के लिए यह सुनकर जल उठना स्वाभाविक था। उसको इसके लिए दोष भी नहीं दिया जा सकता था। सिर पर किसी का हाथ नहीं है, रुपया-पैसा है

नहीं, मदद करने वाला कोई है नहीं—फिर भी समु की माँ लड़की के हाथ पीले कर सकेगी—यह कहना मरे को मारने जैसा ही है।

लेकिन समु की माँ नाराज़ नहीं हुई। सुजाता का हाथ पकड़कर कहने लगी : 'तुम ही बताव दिदिया, होउब न ?'

फिर जाने क्या सोचकर कहा था : 'काहे आय रहे ऊ लोगन हियाँ, चारों जनी त मौहल्ला के बाहर ही रहें, फिर काहे मरने आय रहे हियाँ ? काहे को तुम्हार बिटवा ऊ लोगन को खबरदार करै आय रहा ? आपका त एक्कौ अउर बिटवा हय पर हमार समु इकलौता रहा। बच्चा रहा, तब टाइफैड में मरने वाला रहा। कइसे बचाइस हम ऊ का, अइसे मरै का वास्ते ?'

व्रती को भी दसवीं जमात में जाँडिस हो गया था ! कैसा दुबला-पतला था; नाप-तोलकर बिना मसाले का खाना लेना पड़ता था। उसे जो-जो खाना मना था सुजाता ने भी वह खाना छोड़ दिया था—तब मुर्गी के अलावा और किसी तरह का मांस खाना व्रती को मना था। तब से जो मांस खाना छोड़ा है सुजाता ने तो आज तक नहीं छुआ।

'दूसरे लड़के भी क्या पास ही यहीं रहते थे ?'

'हाँ दिदिया सब, जनी का घर ई मौहल्ला ऊ मौहल्ला मा रहा। बिजित की माई को ऊ का भाई ले गवा रानपुर। पारथ की मैया ज़िंदा मरे के तरह। बीमार रही ऊ पहले ही, अब त बिस्तरा पकड़ लिहिस—एक बिटवा जमराज के गवा, दूसर देस छोड़ दिहिस। लोग कहत है, लौटब त ऊ का काट कै फैंक देब हियाँ के लोग।'

'पार्थ का वही एक भाई था ?'

'हाँ दिदिया, पारथ की मैया न खाय न पिये, न उठे न सोये—बस हरदम कहत है, हमारे दुई बिटवा को लाय देव। पगला गइस। अउरत की जान जइसे बिल्ली की जान, मरै तो छुटकारा मिलै।'

'एक और भी तो लड़का था इनके संग ?'

'ललटू ? ना दिद्दिया, ऊ अपन माई का दुख ना दिहिस। ऊ की माई पहिले ही मर गयी रही। ललटू जनम-अभागा ! बाप दूसर बिआह कर लिहिस, त ऊ हियाँ अपन बहिनि के घर आय के रहे लगिस। इतना भला लड़का ई मौहल्ला मा दूसर नहीं न रहा, दिदिया, जईसे पढ़े-लिखे में अव्वल, वईसई तगड़ा रहा। मौहल्ले मा जित्ता भला काम हो ऊ में अगुवा रहा ऊ।'

'पास ही रहता था ?'

'दुई मौहल्ला छौड़िकै। सब-के-सब ऐक्कौ जइसे रहे, ऊ लोगन के रहत मौहल्ला मा कोई बुरा काम न हो सकत रहा। ललटू ही त ऊ लोगन को ऊ रास्ता में ले गवा। आप भी मरा अऊर सब का भी मारिस।'

सुजाता को याद आया। मुरदाघर में उसने कुछ लाशें देखी थीं। श्मशान में कुछ लोगों को सिर पीटते देखा था और सुना था उनका रोना-चीखना। उन लाशों, उन शोकाकुल स्त्री-पुरुषों के साथ किस गणना के चक्र से वह भी मिल गयी थी, यह उसे तब नहीं मालूम चला। अब समझती है, सिर्फ़ मृत्यु में ही व्रती उन लड़कों के साथ एक होकर नहीं पड़ा था—जीवन में भी वह उन्हीं के साथ घुल-मिल गया था, उनके जैसा हो गया था।

व्रती के जीवन का जो अध्याय उसका अपना बनाया हुआ था, जहाँ वह स्वयं संपूर्ण था, उस अध्याय में व्रती इन लड़कों के साथ एकात्म हो गया था। यही थे उसके निकट के आत्मीय; सुजाता और घर के लोग नहीं। 'मेरा बेटा', 'मेरा भाई'—ये शब्द व्रती के जन्म से निर्धारित कुछ संज्ञा, और नाम-मात्र थे, और कुछ नहीं।

लेकिन अपना मत, अपनी आस्था, अपना आदर्श लेकर व्रती ने अपना एक अलग अस्तित्व बनाया था। जिस भिन्न व्रती की सृष्टि उसने की थी वह व्रती माँ को चाहे कितना भी प्यार करे—या माँ चाहे उसे कितना ही प्यार करे—वह उसे पहचानती तक नहीं थी। सुजाता जिस व्रती को कभी नहीं पहचान पायी, ये लड़के उसी व्रती के दोस्त थे।

इसीलिए वे जीवन और मृत्यु—दोनों में व्रती से एकात्म बने रहे और

आज सुजाता भी उन्हीं लोगों से एकात्म है जो इन लड़कों के शोक को आजीवन ढोते रहेंगे।

व्रती के मरने के एक साल बाद तक, जब तक सुजाता समु और इन दूसरों के घर नहीं आयी, तब तक जैसे अपने ही शोक के घेरे में बन्दी बनी हुई थी। समु की माँ का असहाय विलाप और रोना सुनकर, उन सब लड़कों की बातें सुनकर ही सुजाता ने यह महसूस किया कि व्रती उसको अपने निःसंग शोक के अकेलेपन में छोड़कर नहीं गया। उसी की तरह कितने ही और शोक-संतप्त जनों को आत्मीय बना कर गया है!

लेकिन सुजाता क्या उनके बीच जाकर मुक्ति पायेगी? वह धनी अभिजात जो है—बिलकुल अलग वर्ग की सदस्या! ये लोग क्यों उसे अपनाने लगे?

समु की माँ कह रही थी: 'ललटू काम-काम करिकै पगला हुई जात रहा। एक्कौ काम ना मिला, तबही से बावला जइसा होइ गवा, अऊर तबहि से ऊ का मन मा ई आग धधकै रही।'

इस बार भी समु की माँ रो रही थी। सुजाता उसकी हथेलियों पर हथेली फेर रही थी। इस एक साल में समु का और दूसरों का घर और भी पुराना हो गया था। चारों तरफ़ दारिद्रय के चिह्न उभर आये थे। समु की माँ शायद ऐसी साड़ी पहने थी जिसे पहनकर सुजाता के सामने नहीं आया जाता। सुजाता के आने पर अन्दर से कपड़े बदल कर आयी। यह साड़ी अगर इतनी घिसी और पैबन्द लगी है तो इससे पहले जिसे उतारा है, वह कैसी रही होगी?

इस बार कमरे के एक तरफ़ से छत नीचे ढल गयी है; एक खूँटी से उसे टिका रखा है। तख्त कमरे में नहीं दिखायी दे रहा है। ज़मीन पर चार ईंटों पर एक तख्ता डाला हुआ है। शायद आजकल बरामदे में खाना नहीं बनाया जाता। कमरे के एक कोने में ही अँगीठी, दो-चार बर्तन उलट-कर रखे हुए हैं।

समु की माँ का चेहरा और भी टूटा-बिखरा, जीर्ण-शीर्ण लग रहा है।

दुर्भाग्य के हाथों अपने-आपको पूरी तरह सौंप देने से जैसी हताशा और विवशता घेर लेती है वैसा ही हाल हो गया था उसका। फुटपाथ में पड़े किसी सूखे से पीड़ित वच्चे, या नाली के पास घूमने वाले विल्ली के वच्चे, या पंख-नुचे कौवे के छौने की तरह उसके सिर पर मौत की छाया मँडराती-सी दीखती थी।

लेकिन इतना होने पर भी समु की वहन का चेहरा रूखा, उद्दंड और आक्रोश से भरा हुआ था। एक साल तक शायद उसे जानवरों की तरह अपने चारों ओर की निष्ठुरता से जूझना पड़ा होगा। इसीलिए ऐसे जल कर कोयला हो गयी है। सुजाता भूखी-प्यासी आँखों से समु की माँ और उसके कमरे को देखने लगी। मन कह रहा है—यहाँ शायद और कभी नहीं आना होगा। और कभी समु की माँ के साथ बैठकर यह महसूस नहीं करेगी कि वह अकेली नहीं है। अगली सत्रह जनवरी को क्या करेगी सुजाता ? पिछली सत्रह जनवरी से आज तक जानती थी कि उसके जाने की, बैठने की एक जगह है। लेकिन आज समु की वड़ी वहन चुपचाप, ठंडी उपेक्षा के साथ वाहर चली गयी—विना शब्दों के उसको वता गयी कि उसका यहाँ आने का स्वागत नहीं होता।

इसीलिए सुजाता व्याकुल, भूखी आँखों से पूरे कमरे को और समु की माँ को देखती रही। इसी कमरे में अपने जीवन के कुछ आखिरी घंटे विताये थे व्रती ने; समु की माँ के विछाये हुए साधारण-से विस्तर पर वह सोया था। समु की माँ ने सुजाता के वेटे को आख़िरी पल से कुछ पहले तक अपने पास पाया था।

समु की माँ ने कहा था : 'तुम्हारा दिल मा चोट लगिस, उकरै हियाँ आत हो दिदिया, मगर हमार जिन्दगी अंधन-लँगरन की जइसी, काहे दिदिया, हमार लड़की कहत रही जो ऊ समु की वहिनी करके ऊका कोऊ काम न दैवो, ई सच ह का ?'

क्या 'सच', है, क्या 'झूठ'—यह सुजाता को क्या मालूम ? वे आस्थाहीन लोग आज नहीं हैं, लेकिन उनके परिवार तो हैं। उन आस्था-हीन लड़कों के पास कुछ अलिखित, अव्यक्त, लेकिन ठोस नैतिकता तो थी।

उनके परिवार वालों के पास भी ऐसी कोई नीति है या नहीं, कौन जाने ?

उस समय, ढाई साल तक, वरानगर और काशीपुर को सुधारने के समय तक, इन लोगों के वारे में पूरी चुप्पी साध लेने की अलिखित नीति अपनायी थी सव लोगों ने। राष्ट्रीय कार्यक्रम, टोकियो में हाथी भेजना, मेट्रो का फ़िल्मोत्सव, मैदान में कलाकारों और साहित्यिकों का जमघट, रवीन्द्र-सदन का कवि-सम्मेलन—इन सवके पीछे एक वड़ी सुनियोजित मनोभावना काम कर रही थी।

नहीं, विचलित होने की कोई वात नहीं, क्योंकि ऐसी महत्त्वपूर्ण कोई घटना नहीं हुई ! कुछेक हज़ार लड़के नहीं हैं अव, यह सही है लेकिन उससे किसी का क्या आता-जाता है ? किसी माँ के मन में यह वात आती थी या नहीं, पता नहीं। लेकिन सुजाता के मन में तव भी यह वात उठती थी कि सिर्फ़ पश्चिम वंगाल के तरुण ही आज त्रस्त हैं—ताड़ना और हत्या के योग्य हैं। फिर भी इन हत्याओं की तुलना में और भी महत्त्वपूर्ण घटनाएँ देश की कितनी ही और दूसरी जगहों पर घटित हो रही हैं। उन लोगों का अस्तित्व, उनकी पीड़ा, निश्चित मृत्यु के सामने अडिग विश्वास—इस सव-कुछ को पूरे राष्ट्र और देश ने उस दिन अस्वीकार किया था।

आजकल सुजाता को सवसे ज़्यादा डर जिस वात से लगता है वह यह है कि अस्वीकार करने के वाद पूरे राज्य ने स्वाभाविकता और सहजता का जो जामा ओढ़ लिया था, वह किसी को हैरत में डालने वाला या अस्वाभाविक नहीं लगता था। यह सहज स्वाभाविकता कितनी भयंकर, पाशविक हो सकती है, वह सुजाता वहुत अच्छी तरह जानती है ! व्रती जैसे लोग जेल में सड़ रहे हैं, रास्ते पर दम तोड़ रहे हैं, कालीगाड़ी में लादे-खदेड़े जा रहे हैं, हिंसक जनता के हाथों मारे जा रहे हैं, लेकिन पूरे राष्ट्र की नीति और विवेक के समान जो लोग हैं वे सव चुप्पी साधे हुए हैं—यह ही एक विषय है जिस पर वोलते समय सवकी ज़ुवान पर ताला पड़ जाता है। लोगों की यह सहज स्वाभाविकता सुजाता को वहुत डरावनी लगती है। उसे डर लगता है जव वह देखती है कि ये लोग अपने-आपको सहृदय, विवेकवान और सामान्य समझते हैं। वाहर देखते वक़्त इनकी

दृष्टि स्पष्ट ही वहुत दूर तक चली जाती है, लेकिन अपने घर में वही दृष्टि, धुँधली और अस्पष्ट हो जाती है।

कई हज़ार लड़कों की उपेक्षा करो, पूरी तरह से अवहेलना करो, इसी तरह उनका अस्तित्व मिट जायेगा! जेलों में और जगह नहीं है? हज़ार-हज़ार लड़के लापता हैं—ध्यान मत दो, विलकुल आँखें ढक लो, इसी तरह उनकी सत्ता का निशान भी नहीं रहेगा!

लेकिन उनका परिवार, वर्ग, उसकी भी उपेक्षा करके क्या उन्हें अस्तित्व-हीन करने की नीति अपनायी जाये?

सुजाता क्या कहे—समझ में नहीं आ रहा था। उसने कहा, 'मैं तो काम कर ही रही हूँ।'

'तुम्हारा और हमार लड़की की का वरावरी दिदिया, तुम्हार कतनी जान-पहिचान रही, देखओ सव जनि क नाम अख़वारन मा छपै रही मगर वरती का नाहीं छपिस, हमार न कोउ जान न पहिचान अउर ना पइसा का जोर।'

सुजाता को पता था, समु की माँ के मन में इस फ़रक का अहसास होगा। मानसिक चोट और शोक ने इन दोनों को काँटापुकूर के मुरदाघर और श्मशान में एक कर दिया था, लेकिन वह साम्य हमेशा स्थायी रहने वाला नहीं था। शोक से भी वलवान है समय। शोक तट है तो समय सदा प्रवाहित होने वाली गंगा। समय शोक पर वार-वार मिट्टी की परत चढ़ाता जाता है। फिर एक दिन प्रकृति के अमोघ नियमों के अनुसार समय की परतों के नीचे दवे शोक पर अंकुर-सी उँगलियाँ उगती हैं। अंकुर—आशा, दु:ख, चिन्ता और द्वेष के अंकुर!

उँगलियाँ ऊपर, और ऊपर को उठती हैं, आसमान को नोच लेना चाहती हैं।

समय सव-कुछ कर सकता है। समय की शक्ति के वारे में सोचते हुए भी सुजाता को डर लगता है। शायद एक दिन ऐसा भी आयेगा जब सुजाता की चेतना में व्रती का चेहरा धुंधला, अस्पष्ट-सा हो जायेगा, किसी

पुरानी फ़ोटो की तरह। शायद एक दिन सुजाता सब लोगों के सामने सहजता से व्रती का नाम ले सकेगी—जब-तब ही रोएँगी !

समय सब-कुछ कर सकता है। दो साल पहले उनको और समु की माँ को शोक ने एक साथ लाकर खड़ा कर दिया था। समीकरण का वह हिसाब, समय के हाथों ने मिटा दिया। शोक की भयंकर चोट से दोनों का वर्ग-अन्तर मिट गया था।

समय गुज़र गया था, इसीलिए समु की माँ के मन में फिर से वर्ग का व्यवधान आ गया है।

सुजाता ने पूछा, 'समीरन की बहन पास हो गयी ?'

'फसपाट दिया रेहिस, सिकंड पाट देय पर गिराजुअट होई सकत। टैप सीखत हय आजकल। तऊ आधा समय जाय नहीं चाहत, कहत हय, कपड़ा-लत्ता नाहीं, जूता नाहीं, हम नाहीं जाव, तू लोगन खातिर अपन जान नाही देव। इसब गुस्सा होये कहत रही दिदिया, नाहीं त बिटिया फरज सोचत है।'

'मुझे नहीं लगता कि समीरन की वजह से उसे कोई असुविधा होगी। लेकिन फिर भी मैं देखूँगी, कोई नौकरी की खबर मिली तो बताऊँगी।'

'का कहत हो दिदिया, अइसन बढ़िया टूसन छूट गवा ऊ का। चालीस रुपिया पाइत रही। लड़का का बाप कहिस, हम तुमका ना रखब, तुम ऊ पाटी में रहिल ! हाँ दिदिया, हम सच्ची कहत हैं।'

'सब लोग एक जैसे नहीं होते।'

'दिदिया, तुमहि देखौ, हाँ मगर इ आजकल एकौ बड़ा काम करत है, छुटका दूनौ को गौरमिंट बोर्टिग में डाल दिहिस। जिका बाप नाहीं ऊका अनाथ आसरम में रख लेत हैं।'

अच्छा ही किया !

'हमार बिटिया कहत रही, बरती की माई हमार घर आत है करिके

लोगन हमका हजार बातन पूछत है। जो ऊ सवका मार डालिस उनमा एक जनि पूछत रहा, तुहार माई अऊर बरती की माई मा का खुसर-पुसर चलत हय। छछुंदर का विल मा हाथी का का काम ? विटिया हमार डर के मारै मरत हय। रात-विरात लड़कन का पढ़ाय के लउटत है ऊ। सउदा-सुलफ भी लावत हय। इ करके डरात हय ऊ सवन से। ऊ लोगन सव कर सकत हैं, दिदिया।'

'वे लोग—मतलव ?'

'हाँ, दिदिया, ऊ लोगन। अव सव कै सव पाटी वदल लिहिस। ऊ लोगन का कउनो सजा नाहीं दिहिस; सीना तानि कै चलत हँय सव, अउर देखौ हमार विटिया का पूछत हैं : 'काहे री, अपन भइया का शराध काहे नाहीं किहिस, त हम पेट भरिकै खाइत !' दिदिया, इ लोग चाय की दुकानि में वइठ के इ वात करत हैं। पत्थर दिल सव के सव।'

सुजाता ने सोचा, सच ! वह मोड़ पर टैक्सी से उतर कर साइकिल-रिक्शा पर आ जाती है। कभी अपने दायें-वायें आँख उठाकर भी नहीं देखा। चाय की दुकान पर जो लोग वैठते हैं, उन्हीं में से कोई-कोई व्रती के हत्यारे हैं ! अभी तक वे लोग वे-रोकटोक घूम रहे हैं। समु की वहन को ताने मारते हैं! यह कैसे शहर में रह रही है वह जहाँ यह सब घटता रहता है और साथ-ही-साथ होता है रवीन्द्र-मेला, संस्कृति-मेला, एक के वाद एक, नियम से !

इधर दल और झंडे वदलते ही हत्यारों को छुटकारा मिल जाता है। और उधर जेल की दीवारें और ऊँची होती जाती हैं, दीवारों पर वाच-टॉवर वैठाया जाता है—सव एक साथ चलता है, चल रहा है, लेकिन और कव तक ?

समु की माँ ने कहा : 'तुम ही भागमान रहिस दिदिया, एक बिटवा गवा त दूसर का छाती से लगाय के ऊ को दुख भूल सकत हो। हमार त एक्कौ रहा, छाती का पसली अभी टूट गवा। हमार छाती की चिता त चिता पै चढ़ै पे वुझिवे।'

सुजाता ने कहना चाहा कि अगर वह समु की माँ की तरह फुक्का फाड़-कर रो पाती, ज़ोर-ज़ोर से विलाप कर पाती तो वच जाती। लेकिन वह

समु की माँ से कहे कि व्रती की मौत के बाद से वह छाती पर पत्थर रख कर जी रही है, दिल खोलकर रो तक नहीं पायी तब भी तो समु की माँ उसे असामान्य मानेगी। व्रती की मौत की ख़बर पाते-न-पाते जो लोग उस खबर को दबा देने के लिए झपटकर जाते हैं, उन लोगों के सामने रो नहीं सकी थी सुजाता, आवाज़ बन्द हो गयी थी उसकी। यह सब समु की माँ कभी नहीं समझेगी !

समु के माँ-बाप ने उस समय तो कुछ भी नहीं सोचा था।

रात के बारह नहीं बजे थे। दुःस्वप्न—सब दुःस्वप्न जैसा लगता है। बारह बजने से पहले ही उन लोगों ने समु का मकान घेर लिया था। एक-एक करके लोगों को इकट्ठा होते देखकर ही समु की माँ सुबक उठी थी और मुंह पर हाथ रखकर रुलाई रोके थी। समु के बाबू ने बेबस, व्याकुल होकर पूछा था : 'का करैं अब, पिछवाड़े जाइके देखीं, हुआँ से भाग सकत कि नाहीं...।'

समु ने धीरे से कहा था : 'फ़ायदा ना होइहैं बाबू, उ लोगन पीछे से भी घेर लिहिस, हम आवाज़ सुने रहे उनका।'

'निकालिये उन सबको।' दबी-दबी हिंस्र आवाज़ !

'बाबू की आवाज़ जस लागत है ना ?' समु के बापू ने कहा।

'बाहर निकालिये उनको !' फिर हिंसक चीख़।

'नहीं तो आग लगा देब। ऐ समुआ, बाहिर आय जा, असल बाप का होय त निकल आ बाहेर।'

समु ने गरदन मोड़कर सबको देखा और कहा था : 'हम पहिले जायँ बाहर, त ऊ लोग हमका पहिलै पकड़बें, तू लोगन मा एक्कौ भाग नाहीं सकबे का ?'

'बाहेर आ साले !'

व्रती ने तब समु से कहा था : 'कोई फ़ायदा नहीं है, समु ! तू अकेले क्यों जायेगा ? सब साथ चलेंगे।'

दुःस्वप्न। सब दुःस्वप्न !

व्रती पहले उठा था। खिड़की के पास जाकर चिल्लाकर बोला था : 'गाली मत दीजिये; हम लोग आ रहे हैं। इंतज़ार कीजिये।'

'स्साले, ई बाबू साहब का कहाँ से लावा ? बाहेर आ रे बाबू का पट्ठा, बाहेर।'

'ना जा, समुआ रे...।'

'माई, रोवो जिनि, बापू का देखो, हम बाहेर जात है, नाहीं त ऊ लोग आग लगाई देव !'

विजित पाजामे को कसकर बाँध रहा था। हाथों से बाल सँवारे थे। पार्थ कभी भी ज़्यादा बात नहीं करता था। उसने कहा था : 'चल. विजित !'

विजित और पार्थ के पास चाकू था; समु और व्रती के पास कोई हथियार नहीं। वे लोग खड़े हो गये—एक-दूसरे का हाथ पकड़कर नारे लगाते हुए उन्होंने दरवाज़ा खोल दिया था।

'तोर पहिले हम मरब'—कहकर समु के बापू आगे बढ़े, लेकिन समु ने उनको धकेल दिया था। नारे लगाते-लगाते वे बाहर निकल गये थे। बाहर अँधेरा और कुछ घुप्प अँधेरे चेहरे, 'हा-हा-हा', हँसी और उल्लास, चारों तरफ़ उमगते हुए ठहाके ! घरों में एक-एक करके बत्तियाँ बुझती जा रही हैं—दरवाज़े, खिड़कियाँ बन्द होती जा रही हैं, चौंककर डरे हुए चेहरे अंधकार में छुपे जा रहे हैं, और उधर आसमान में ज़ोरों से सीटी की आवाज़ उछाल दी जाती है। चुटकी बजाने की आवाज़, दुर्गा-प्रतिमा विसर्जन के समय जैसा होता है। इन लोगों की आवाज़ में नारे, नारे लगाते हुए चाकू सीधा कर दौड़ आते हैं ! किसके गले में घोंप रहे हैं ?

एक चीख़...'स्साले चाकू चलात हो।' किसी ने कहा था, 'कर खतम स्सालों क।' नारे तीन आवाज़ों में, फिर विजित की गर्दन पर फंदा आ फँसता है बड़ी फुरती के साथ। उसकी आवाज़ घुट जाती है। 'हा-हा-हा,' नारे ! नारे ! स्लॉगन ! 'ज़िन्दाबाद !' 'जुग-जुग जीओ, ज़िंदाबाद ! जुग-जुग जीओ !' बेहिसाब हड़बड़ी। अचानक सब आवाज़ें रुक गयीं। हत्यारे दूर हटते जा रहे हैं। गोली की आवाज़—फट्-फट्-फट् ! जाड़े की

सर्द हवा ठिठक जाती है; बारूद की गंध, हवा का दम घोंटती बारूद की गंध ! कालिमा से लिपटे चेहरे दूर भागे जा रहे हैं...।

'हाय-हाय-हाय !' समु के बापू छाती पीटते हुए पछाड़ खाकर गिरते हैं, 'समु रे !'

'दद्दा रे !' बहनें रोती हैं। समु की माँ को और कुछ नहीं मालूम। बेहोशी। अँधेरा, गहरा अंधकार !

समु की माँ कैसे समझेगी कि सुजाता क्यों नहीं रो सकती ? कैसे मानेगी कि उस घर में व्रती का नाम भी कोई नहीं लेता ? कैसे सोच पायेगी कि व्रती का नाम अख़बार में न छपे, इसके लिए व्रती के बाबूजी को कितनी दौड़-धूप करनी पड़ी थी !

क्योंकि अपने को बचाने की बात समु के बापू ने कभी नहीं सोची—कभी सोचा भी जा सकता है, यह भी उन्हें नहीं पता था। जो लोग सोच सकते हैं, उनके साथ समु के ग़रीब दुकानदार पिता का कभी कोई परिचय ही नहीं हुआ। दिव्यनाथ जैसे लोग और समु के बापू जैसे लोग इसी दुनिया के दो अलग-अलग देशों के वासी हैं !

समु के बापू ने तब सोचा था, थाना-पुलिस करने से सब ठीक हो जायेगा। डर कर सब भाग जायेंगे। दौड़कर हाँफते-हाँफते किसी तरह वह थाने पहुँचे। उन दिनों क्या रात, क्या दिन—थाना सब समय रोशनी से जगमग रहता था। 'चलै साहेब, अब भी जाय त बिटवा बच जाव, अस्पताल ले जाइके होत, साहेब पाय लागी, चलै।'

लेकिन थाने में बैठे बाबू उम्र में ज़्यादा न होने पर भी ज़्यादा अक़्ल के थे। जब समु के बापू ने हत्यारों के नाम बताये तो ज़ोर से धमका दिया। समु के बापू बड़े असहाय प्राणी हैं—केंचुए की तरह ज़मीन पर रेंगने वाले—पैरों से मसल कर सभी चले जाते हैं। पहले वह डरकर चुप हो गये। फिर ज़ोर से रो उठे : 'हम अपन आँखन ने देखिस, साहेब, आवाज़ सुनिस।'

'नहीं, कोई आवाज़ नहीं सुनी आपने।'

'चलैं तौ हज़ूर !'

'जायेगी, वैन जायेगी।' उसी समय समु के पिताजी थाने के एक और वाबू को देखते हैं और उनके पैर पकड़ लेते हैं। उसके वाद काफ़ी देर से वैन आयी। समु के वापू वैन पर चढ़कर बैठते हैं। कॉलोनी में घुसते ही पागलों की तरह चीख़ते हैं : 'समु, जवाव देव, विटवा समु रे !' चीखते हैं और हाँफते हैं ! आश्चर्य है, वैन को रास्ता भी नहीं वताना पड़ता। सीधे फुटवाल के मैदान तक चली जाती है वैन। दूर से वैन की रोशनी पड़ते ही कुछ लोग छिटक कर अलग हो जाते हैं, और पता नहीं कौन लोग भागकर चले जाते हैं। कुछ चेहरे. लोग रोशनी की गिरफ़्त में आ जाते हैं, और पता नहीं क्यों वैन की गति धीमी हो जाती है। वैन जव तक धीरे-धीरे वहाँ पहुँचती है, तव वहाँ कोई नहीं होता। भाग जाने का मौक़ा दे दिया जाता है ! पास जाकर वैन रुकती है। ढेर-सी रोशनी विखर जाती है विजित की देह पर। समु के वापू जिस-जिस पर रोशनी डालते हैं टॉर्च की, उस-उस को देखकर चीखते हैं। फिर 'समु' कहकर ज़मीन पर लुढ़क जाते हैं। देखते हैं, वे लोग समु को टाँगों से खींचकर ले जा रहे हैं। वैन का मुँह खुलता जा रहा है। समु को निगल लेता है वह मुँह ! खट से समु का सिर टकराता है। समु के वापू कहना चाहते हैं, 'सिर वचाय के', पर कह नहीं पाते।

तव सवा तीन वजे थे। इतनी जल्दी वैन पहले कभी नहीं आयी थी।

फिर जव सव-कुछ ख़तम हो जाता है तो फिर से थाने जाते हैं। उनका वयान तो लिखा ही नहीं गया। दारोग़ा वावू की वात लाल वाज़ार थाने में जाकर वताते हैं, लेकिन कोई फ़ायदा नहीं होता। 'हे भगवान, ई देस मा कोई न्याव नाहीं का ?' कहकर फुटपाथ पर सिर कूटते हैं। उनके साले का लड़का उनको पकड़कर घर ले आता है।

समु की माँ कैसे समझेगी सुजाता की बात ? अगर सुजाता कहे, व्रती, वच्चों में से सिर्फ़ व्रती ही उसकी गोद में सिर रखकर लेट जाता था, उसके गले में हाथ डालकर वातें करता था : 'मेरी पीठ पर सावुन मल दो, माँ',

'देखो, हेम ने फिर आज ठंडी चाय दी है.' 'आज बैंक के बाद मैं और तुम सिनेमा जायेंगे', 'आज ही यह कापी लौटानी है, ये नोट्स उतार दो, माँ,' ये बातें समु की माँ को वह बताये तो वह सोचेंगी—ऐसे तो सभी बेटे अपनी माँ से बातें करते हैं। इसमें बताने की ख़ास बात क्या है?

सुजाता अगर उन्हें बताये कि वह एक, ऐसे समाज में रहती है जहाँ पैरों के नीचे धरती का आधार नहीं है, धरती में धँसी जड़ें नहीं हैं, एक बेजान मरा हुआ समाज, जहाँ नंगी देह दिखाने में शर्म नहीं, शर्म है भावनाओं को दिखाने में! अगर वह बताये कि उस समाज में माँ-बेटे, बाप-बेटे, पति-पत्नी—हरेक सम्बन्ध ज़हरीला हो जाने पर भी कोई किसी को मारता नहीं, दिल खोलकर कोई रोता नहीं, सब एक-दूसरे के साथ भद्र, नम्र बरताव रखते हैं, तो वे सब बातें समु की माँ की समझ में ही नहीं आयेंगी। भाषा वही है तो क्या, भावों का अन्तर समु की माँ को कभी समझ में नहीं आयेगा।

सुजाता अगर कहे कि व्रती को, अपने मृत बेटे को समझने के लिए ही वह यहाँ आती है, तो भी समु की माँ नहीं समझेंगी। सुजाता अगर बताये कि व्रती ने जब बदलना शुरू किया तो सिर्फ़ किताबें पढ़कर या दो-चार बड़ी-बड़ी बातें सुनकर ही नहीं बदला था वह। समु की तरह दीन-दरिद्र माँ-बाप की सन्तान, लालटू की तरह अभागे, अपमानित युवक, इन लोगों के, और भी कितने लोगों के सीने में धधकती आग को अपने ख़ून में महसूस करके ही वह बदला था। जीवन ने उसे बदल जाने को विवश कर दिया था। इसीलिए उसने अपने सुरक्षित निर्दिष्ट जीवन का त्याग कर दिया था। अगर वही जीवन अपनाता तो वह विलायत जाता, लौट आता, बड़ी नौकरी करता, समाज की ऊपरी मंज़िल तक चढ़ जाता बड़ी आसानी से, बिना किसी कोशिश के।

ये सब बातें समु की माँ नहीं समझेंगी, क्योंकि समु की माँ ने अभी-अभी कहा: 'तुहार बिटवा का चेहरा हमार आँखिन के आगे दीखै रहा दिदिय', जिन लोगन के पास कछु नाहीं ना'—ऊ लोगन पगलाय जाव, ई त इक बात हय, हमार समु बचपन ते कहत रहा, 'काहे? हम भिखमँगा जस काहे

रहवो, जउन सबका मिले ऊ हमका काहे न मिलवै ? काहे हम भीख माँग के लात खाव दूसरन का ?' मगर बरती का कौनो दुख नहीं रहा, ऊ का सब-कुछ रहा, ऊ काहे नरैके आहिस ?'

'उनको, उन लोगों को आगाह करने आया था।'

'दिदिया, तुम त जानि रहे कि तुम्हार बिटवा कौन रास्ता पै चलत है, तुम ऊ का काहे नाहीं रोकिस ?'

समु की माँ को नहीं पता कि आज वह जीत गयी हैं. क्योंकि उनको पता था कि समु क्या कर रहा है। सुजाता के पास ऊँचा सिर, अभिजात चेहरा, कलाई पर घड़ी, महँगी ताँत की साड़ी—ये सब चीज़ें थीं, लेकिन कई हज़ार माताओं के सामने वह पराजित हो गयी थी, क्योंकि उसको ज़रा भी नहीं मालूम था कि उसका बेटा क्या कर रहा है। हार हो या जीत, सुजाता से कभी झूठ नहीं बोला गया। उसने कहा : 'मैं नहीं जानती थी कुछ भी।'

'जानत रहे त कोई बिटवा को ऐसन मरै के पठाय सकत ?'

सुजाता उठ खड़ी हुई।

'फिर आइ हो, दिदिया। तुहार संग बात करै से हमार जी ठंडा हो जात है।'

सुजाता जानती थी, फिर वह कभी नहीं आयेगी। 'चलूँ !' अचानक समु की माँ के कन्धे पर हाथ रखा। उसने कहा, 'आपका बहुत अहसान रहा मुझ पर।'

'कहाँ का अहिसान, दुखिया ही दुखिया का दरद समझत हय।'

आज बिछुड़ते समय समु की माँ को कुछ, बहुत क़ीमती कुछ देने की इच्छा हुई। जी चाहा—अपने अन्दर बनाये हुए शोक के कोषागार से कुछ निकालकर, उन्हें देकर जाये। इसलिए जो वह अपने मुँह पर आज तक नहीं ला सकी, वही बातें कह दी : 'जिस दिन वे लोग मरे, उसके बाद वाले दिन ही व्रती का जन्मदिन था—सत्रह तारीख़ को उसके बीस साल पूरे होकर इक्कीसवाँ शुरू होता।'

□ शाम □

वह मकान उनके घर के पास ही था। आते-जाते कई बार सुजाता ने इसे देखा था, लेकिन कभी अंदर नहीं गयी। किसका मकान है, यह भी नहीं पता था। पुराने ढंग का दुमंज़िला मकान। सामने लम्बा बरामदा। मकान की मुंडेर पर विदेशी नक़्क़ाशी और नाम लिखा हुआ था—पूर्व गंगानगर। शायद मकान-मालिक के गाँव का नाम है। सुजाता के देखते-देखते बीस साल में ही मकान की हालत कलकत्ता जैसी हो गयी। आधा चमकता नया, नयी पॉलिश की दमक, खिड़की पर लगा कूलर—आधा पुराना, पलस्तर उखड़ा, खिड़कियों में पुरानी साड़ियों के बने परदे। मकान के सामने नीचे धोबियों के खोखे, होमियोपैथिक दवा की दुकानें, रेडियो-मरम्मत की एक दूकान—हिस्सा-बाँट के साथ-साथ ग़रीबी और अमीरी का भी बँटवारा हो गया है, ऐसा मालूम पड़ता है।

अँधेरा गलियारा पार करके, पंचायती आँगन के एक तरफ़ एक कमरा। मकान का पिछवाड़ा है यह। सामने एक शरीफ़े का पेड़ बेफ़िक्री से उगा हुआ। कमरे की दीवारों और छत से पलस्तर झर रहा है; फ़र्श पर से सीमेंट उखड़ रहा है। एक बड़ा तख़्तपोश पड़ा है। अलमारी में धूल-भरी, कभी इस्तेमाल में न आने वाली क़ानून की कुछ किताबें। अलमारी पर

लगा है जंग-खाया ताला। सुजाता तख्त पर बैठी थी, नंदिनी उसके सामने मोढ़े पर।

'विट्रे किया था[1] अनिंद्य ने,' नंदिनी ने फिर कहा। पहले भी कहा था; अब कहते समय उसकी आँखों पर विस्मय की छाया एक बादल के टुकड़े की तरह तैर गयी। जैसे अभी भी उसको विश्वास नहीं होता था। वह समझ नहीं पाती कि कैसे यह जानते हुए भी कि इस विश्वासघात के परिणामस्वरूप समु, व्रती और दूसरों की हत्या हो सकती है, अनिंद्य ने यह काम कैसे किया !

'नंदिनी, मुझे सब बातें नहीं मालूम।'

'पता है। आप लोगों को कभी भी कुछ भी मालूम नहीं रहता। जो कुछ हो जाता है, वह आपके लिए सिर्फ़ हो जाना मात्र है। क्यों होता है, कैसे होता है—यह बिना जाने भी चल जाता है। ये विश्वास कितने ग़लत क़िस्म के हैं, अब तो आपको मालूम पड़ रहा है ?'

सुजाता चुप रही।

अनिंद्य ने दग़ा किया था! व्रती लाइक ए फूल ट्रस्टिड हिम।[2] उसकी वजह यह थी कि अनिंद्य को नीतू, जो व्रती का अच्छा दोस्त था, ले आया था। नीतू जिसको लाया—उस पर संदेह नहीं किया जा सकता! व्रती ने यही सोचा होगा। वह उसका दोस्त था न! नीतू क्या जान-बूझकर ही अनिंद्य को लाया था ? सुजाता ने मन-ही-मन पूछा।

बहुत दिनों तक कालकोठरी में रहने से शायद मन की अनुभूतियाँ काफ़ी पैनी हो जाती हैं, क्योंकि कालकोठरी का अकेलापन भयावह होता है; वहाँ आदमी को चारों तरफ़ की बहरी दीवारों, लोहे के दरवाज़ों के बीच, सिर्फ़ दीवार पर बने एक गवाक्ष के पहरे में, अपने साथ निपट अकेले रहना पड़ता

---

1. धोखा दिया था।
2. बेवकूफ़ की तरह व्रती ने उस पर विश्वास किया।

है। अपने मन को छुरी की या संगीन की धार की तरह तीखा-पैना बनाकर वह याद करने की कोशिश करता है कि बाहर की दुनिया में किस-किसने उसे याद रखा है। बीच-बीच में दरवाज़ा खुल जाता है। तब उसे जहाँ ले जाया जाता है, वह जगह भी उसकी मनचाही, बाहरी दुनिया नहीं होती। ये कमरे कुछ और ही तरह के होते हैं। एकदम शब्द या गूँज से सुरक्षित! दरवाज़े, खिड़कियाँ नमदे से ढके, रबड़ के नल लगाकर—आवाज़ अंदर-बाहर न आ-जा सके—ऐसी व्यवस्था से बने। कमरे की चीख़, कराह, मारने की आवाज़, जिरह करने वाले की दहाड़—ये सब आवाज़ें उस कमरे में ही क़ैद रहती हैं। उस कमरे में जिससे जिरह की जाती है, उसकी आँखों के आगे हज़ार वाट की बत्ती जलती रहती है—जिरह करने वाला अँधेरे में रहता है। चाहे वह सिगरेट पीता हो या नहीं—उसके हाथ में सिगरेट थमी रहती है।

'ओह, आप ब्रती चैटर्जी की दोस्त हैं!' महीन आवाज़ में नम्रता और भद्रता से प्रश्न पूछते हुए कभी-कभी जिरह करने वाले सज्जन हज़ार वाट की बत्ती में चमकने वाले चेहरे पर जलती हुई सिगरेट भी छुआ देते हैं। सिगरेट की झुलस से सिर्फ़ चमड़ी पर जलन का सतही घाव लगता है। चमड़ी ज़रा-सा ही जलती है, और वह जली हुई चमड़ी मरहम लगाने से ही ठीक हो जाती है। चमड़ी की जलन का आसान इलाज! ऊपर का घाव तो ठीक हो जाता है, लेकिन युवक या युवती के भीतर हृदय में एक-एक दाग़ ज़ख्म बन जाता है। फिर लौटकर कालकोठरी। अपने साथ अकेले जीना!

अपने साथ अकेले जीने से अनुभूतियाँ पैनी हो जाती हैं—मुरदाघर की छुरी या पुलिस की संगीन की नोक की तरह धारदार, पैनी। इसीलिए नंदिनी समझ गयी सुजाता का मन-ही-मन पूछा गया प्रश्न—कि नीतू जान-बूझकर ही अनिन्द्य को लाया था क्या?

नंदिनी ने कहा: 'नीतू जान-बूझकर लाया था या नहीं, यह अब किसी को, किसी दिन भी मालूम नहीं होगा। नीतू का क्या हुआ था, पता है

आपको ?'

'नहीं ।'

नीतू के वहुत-से उपनाम थे, वहुत-से नाम। व्रती और उसके साथियों के ख़त्म हो जाने के वाद वहुत-से अन्य लोगों की वेरहमी से पकड़-धकड़ होने लगी थी। नीतू को उसके इलाक़े में सब दीपू के नाम से जानते थे। नीतू उस समय भाग गया। कहीं आसपास ही छुपा था—कल-कारखानों की दुनिया में। वहाँ उसे विलकुल दूसरा आदमी समझकर पकड़ लिया गया। उसी समय वहाँ पहुँच गये उसके महल्ले के ऑफ़िसर कमांडिग, हालाँकि उनको वहाँ जाना नहीं था। लेकिन अखवारों ने भी हमें धोखा दिया था। कहाँ-कहाँ छुपने की जगह है, अस्पताल का वंदोवस्त कहाँ है, कहाँ किस गाँव में काम चल रहा है, अखवार वाले वीच-वीच में छाप रहे थे ये ख़बरें, लेख लिख रहे थे। इसी तरह की एक खवर पढ़कर ऑफ़िसर कमांडिग वहाँ पहुँचा था। जीप रोककर वह चाय पीने और गुड़ लेने अंदर गया।

'गुड़ लेने ?'

'हाँ, वहाँ का गुड़ वहुत मशहूर है। उसके लिए दो हँडिया भरकर रखी हुई थीं। उसने घुसते ही नीतू को देखा। कहा, 'दीपू, तुम ?' नीतू उस समय डर से, जिरह के डर से वहुत ही सशंक हो रहा था। वह वोल पड़ा: 'हाँ, देखिये न, ये लोग मुझे पकड़कर ले आये हैं।' ऑफ़िसर कमांडिग ने उसी समय उसे जीप में वैठा लिया। रास्ते में एक होटल में खाना खिलाया, सिगरेट पिलायी। क्योंकि नीतू महल्ले का मन-पसंद लड़का था और महल्ले में उसने कोई भी कार्रवाई नहीं की थी, इसी से उसने सोचा था शायद वह वचकर निकल जायेगा।'

'नहीं निकल पाया ?'

'नहीं ! उसे महल्ले में लाकर थाने के सामने पीट-पीटकर मार डाला गया था। महल्ले की लड़कियाँ भी उस दिन विरोध-प्रदर्शन करने गयी थीं। उनके उपर भी आँसू-गैस छोड़ी गयी थी।'

'अखवार में नहीं छपा ?'

'नहीं।'

'फिर ?'

'नीतू नहीं है। वह अनिंद्य के सब इरादे जानता था या नहीं, अब कोई नहीं जान पायेगा। लेकिन मुझे लगता है...।'

'क्या ?'

'कि जानने चाहिए थे।'

'किसको ? नीतू को ?'

सुजाता नीतू को नहीं पहचानती, इसीलिए आसानी से उसका नाम ले सकी; व्रती ने कब इन लोगों से उसका परिचय कराया था !

'हाँ ! नीतू को, व्रती को, मुझे।'

'क्या जानना चाहिए था ?'

'हम लोग जो कुछ कर रहे थे, उसके साथ-साथ ही, हमारे प्रोग्राम के साथ-साथ कुछ और लोग एक दूसरा प्रोग्राम भी चला रहे थे।'

'कौन-सा प्रोग्राम ?'

'मुखबिरी का,' नंदिनी ने शांत ठंडी आवाज़ में कहा।

अब सुजाता की समझ में आया—अनिंद्य का नाम लेते समय उसकी आँखों में विस्मय की छाया बादल की तरह क्यों तैर गयी थी। अनिंद्य के विश्वास-घात करने पर वह विस्मय नहीं था। विस्मय था व्रती पर, ख़ुद अपने पर और दूसरे लोगों पर। यथार्थ की हर व्यवस्था के लिए आस्थाहीनता पर ही उनका प्रचंड विश्वास था। इसीको उन्होंने जीवन का मूल्य बनाया था। लेकिन इसके साथ-साथ कुछ लोग बड़े सुनियोजित रूप से विश्वासघात के इरादे पाल रहे हैं, दोस्त बनकर धोखा देने की योजना बना रहे हैं, यही बाद में जानने की हैरानी थी नंदिनी को।

'यूँ लगता है, सब-कुछ ही धोखा-धड़ी है।'

नंदिनी ने फिर कहा। सुजाता ने देखा—उसके दुबले, साँवले, थके हुए चेहरे पर आँखों के नीचे गहरी काली छाया है—पहाड़ों की ढलान के नीचे, तलहटी पर हमेशा रहने वाली छाया की तरह।

लगा, नंदिनी को कभी भी जाना नहीं जा सकेगा, वह कभी पहचान में नहीं आयेगी। सहसा महसूस हुआ—जैसे बहुत बड़ा नुक़सान हुआ जा रहा है। खालीपन के अहसास से वह घिर गयी। व्रती ने जिसको प्यार किया था, उसका मन हमेशा अचीन्हा, अजाना रह जायेगा? यह सोचकर ही सुजाता को बड़ा दुःख हुआ। नंदिनी के किसी विश्वास, किसी अनुभव को वह बाँट नहीं सकी, साझा नहीं बना सकी। समझने की कोशिश नहीं की व्रती और नंदिनी जैसे लोगों को। अब तक जिन चीज़ों में व्यस्त थी—उसमें क्या सार्थक है, क्या निरर्थक, यह उसको कौन बतायेगा? अपने मन और स्वभाव की खामियों को सुजाता ऐसे ही एक-एक करके पहचान पायेगी, क्या इसीलिए व्रती उस दिन शाम को नीली कमीज़ पहनकर निकल गया था? सीढ़ियों के नीचे खड़े होकर, आँखें उठाकर देखता रहा था उसे?

अगर वे क्षण लौट आयें तो सुजाता क्या करेगी? वह सीढ़ियों से उतर कर नीचे चली आयेगी। व्रती को गले लगा लेगी, कहेगी: 'मैं सब-कुछ जानूँगी व्रती, सब कुछ जानना शुरू करूँगी। बस, तू कहीं मत जा। कलकत्ता में बीस साल का लड़का एक महल्ले से दूसरे महल्ले तक नहीं जा सकता। तू मत जा।'

लेकिन समय लौटकर नहीं आता। समय बीत जाता है—नियति की तरह निर्मम समय—समय, बहती जाह्नवी और शोक, जैसे कि जाह्नवी का रेतीला तट। समय के बहाव से शोक पर तहें जमने लगती हैं। फिर एक दिन उन परतों को भेदकर नये अँकुरों की अँगुलियाँ निकलती हैं। ये अँगुलियाँ आकाश को छू लेना चाहती हैं। आशा, व्यथा, सुख, आनन्द के अंकुर—अँकुरों की अँगुलियाँ!

'सब-कुछ धोखा-धड़ी-सा लगता है।'
सुजाता की चिन्ता की दीवार के उस पार से नंदिनी ने कहा।
'इससे तुम्हारा कष्ट ही बढ़ेगा, नंदिनी!'
'नहीं, बिलकुल नहीं, उलटे जब तक दग़ा-धोखे के अस्तित्व से अनजान

थी, तव अपने ऊपर अटूट विश्वास था। लेकिन उस विश्वास की कोई बुनियाद नहीं थी। सो व्हेन आई स्टार्टिड डाउटिंग, व्हेन आई थॉट ऐंड थॉट ओवर द फ़ैक्ट्स, आई कुड वी मोर श्योर, नाउ आई नो व्हेयर आई स्टैंड[1]।'

'डज़ इट हैल्प यू एनी ?'[2]

'हाँ, अव लगता है कि तव कितनी सहजता से हम महसूस करते थे कि एक युग, एक कल्प खत्म होता जा रहा है। वी आर व्रिंगिंग ए न्यू एज इन।[3] मैं और व्रती सिर्फ़ वातें करते-करते ही कितने दिन श्यामवाज़ार से भवानीपुर तक पैदल लौटे हैं। तव जो कुछ हम देखते थे—मकान, लोग, सड़क पर लगी नियॉन की वत्तियाँ, फुटपाथ के फेरीवाले के पास लाल गुलाव, सड़क के किनारे के तोरण, वस-स्टॉप पर चिपके पोस्टर, लोगों के चेहरों पर विछी हँसी, रास्ते पर फैली किताबों की दुकान पर किसी छोटी-सी पत्रिका में छपी कविता और उसकी तसवीर ! जव मैदान में होने वाली मीटिंग में लोगों की तालियाँ, हिन्दी के गानों की सुन्दर धुन सुनते थे हम लोग, तव कैसे अपार आनन्द से भर जाता था मन, छलका पड़ता था आनन्द ! वी फ़ेल्ट एक्सप्लोसिव, फ़ेल्ट लॉयल टु ऑल ऐंड एवरी थिंग।[4] वह मन अव और लौटकर नहीं आयेगा। मैं उस मनःस्थिति को कभी नहीं पा सकूँगी। एकाएक सव-कुछ गँवा चुकी हूँ। एक युग, एक कल्प—सचमुच लोप हो गया। उस दिन की वह 'मैं' अव मर गयी हूँ ?'

'क्यों नंदिनी, व्रती नहीं है इसलिए ?'

'हाँ, व्रती नहीं है इसलिए। और भी कितना कुछ जो था, अव नहीं है। कालकोठरी में रहकर सोचते-सोचते मैं भी खत्म हो गयी हूँ।'

'ऐसा मत कहो।'

---

1. लेकिन जब मैंने संदेह करना शुरू किया, सब तथ्यों को ग़ौर से देखना शुरू किया, मैं ज्यादा विश्वस्त होने लगी, अब मुझे मालूम पड़ने लगा कि मेरी स्थिति क्या है।
2. इससे तुम्हें किसी तरह की राहत मिलती है ?
3. हम एक नयी दुनिया को जन्म दे रहे हैं।
4. हमारे मनों में किसी भी वक़्त विस्फोट फूट सकता था—हमारे मन हर चीज, हर बात के प्रति विश्वास से भरे हुए थे।

'माँ भी आपकी तरह बातें करती हैं; माँ नहीं समझतीं, आप भी नहीं समझेंगी।'

'क्या मैं बिलकुल ही नहीं समझूँगी, नंदिनी ?'

'कैसे समझेंगी ? क्या आप लोगों ने हमारी तरह अपनी आस्था को दाँव पर लगाया था ? टु एवरी थिंग ऑफ़ एवरी डे लाइफ़ ?'[1]

नहीं, सुजाता ने यह सब-कुछ नहीं किया था। किसी राहगीर की हँसी में, तैर कर आती गाने की धुन में, लाल गुलाबों के गुच्छे में, झिलमिलाती रोशनी में, लटके हुए वंदनवारों के कपड़े में अपनी आस्था को बंधक नहीं रखा था। क्या उसने कभी भी, किसी चीज़ में अपनी आस्था को दाँव पर लगाया था ?

'अब समझ में आता है किस तरह धोखा-धड़ी चल रही थी। अभी भी चल रही है।'

'अभी तक ?'

'हाँ, अभी तक। नहीं तो एक के बाद एक जेल की दीवारें क्यों ऊँची होती जा रही हैं ? क्यों हैं वाच टॉवर ? क्यों हज़ारों-हज़ार लड़के जेलों में सड़ रहे हैं, और कोई एक शब्द भी नहीं बोलता ! जब कोई बोलता भी है तो अपने दल के स्वार्थ को सुरक्षित रखकर। क्यों, हम, जो लोग काम करना चाहते हैं, एक अख़बार भी नहीं निकाल सकते ? प्रेस, टाइप—हमें यह सब-कुछ नहीं मिलता, लेकिन फिर भी हज़ारों-हज़ार पत्रिकाएँ निकलती हैं; सुनते हैं, वे पत्रिकाएँ हमारे लक्ष्यों के प्रति सहानुभूति से पूर्ण हैं। मात्र धोखा ! कितने लोगों ने धोखा दिया—न जानकर सिर्फ़ इधर-उधर की हाँकते हैं। क्यों मुट्ठी-भर कवि उस समय 'बँगला-देश', 'बँगला-देश' करके पागल होते थे, और अब रो-रोकर कविता लिखते हैं ! धोखा-दग़ा ! क्यों अब भी लोग गिरफ़्तार किये जाते हैं ? जेल में गोली चलती है ? धर-पकड़ चलती रहती है ? कुल धोखा...!'

'अभी तक ?'

'अभी तक, माँ। क्यों ?अखबार में छपता नहीं, इसलिए धर-पकड़ हो

---

1. प्रतिदिन की हर बात पर, हर चीज पर।

नहीं रही है क्या ? गोली नहीं चल रही हैं ? क्या नहीं हो रहा है ? होगा क्यों नहीं ? क्या ख़त्म हुआ है ? कुछ नहीं । 'नथिंग हैज़ इन्डीड ।[1] बस सोलह से चौबीस बरस तक की एक पीढ़ी ख़त्म हो गयी, हो रही है ।'

जो कभी नहीं करती, सुजाता ने वही किया । आवेग में वह कोई काम नहीं करती । पूरी ज़िन्दगी में जो चाहा वह कर न पायी । छोटी उम्र में तूफ़ान देखने के लिए अगर वह कभी खिड़की में खड़ी हो जाती थी, तो भी दिव्यनाथ मना करते थे । छोटी उम्र में जो अनुशासन स्वभाव में पका दिया जाता है उससे पार पाना मुश्किल है । फिर भी सुजाता ने नंदिनी के हाथों पर अपना हाथ रखा । मन-ही-मन वह महसूस कर रही थी कि यह संग फिर लौटकर नहीं आयेगा, जैसे नीली कमीज़ पहने सीढ़ियों के नीचे व्रती के खड़े होने का अमूल्य दुर्लभ क्षण फिर कभी लौटकर नहीं आयेगा । अब इस समय, मन की अतल गहराइयों में—यह कैसी शून्यता है, कैसा सीमाहीन शोक है—नंदिनी को और कभी इतने पास वह नहीं पा सकेगी !

नंदिनी के हाथों पर हाथ रखते समय डर लग रहा था, सोचते हुए भी डर लग रहा था कि क्या नंदिनी अपना हाथ हटा लेगी और उसको उसके जाने-भुगते हुए जीवन के घेरे में फिर से धकेल देगी ? एक बार फिर समु की बहन की आँखों में जो प्रत्याख्यान था—वही नंदिनी की आँखों में देखेगी ? सुजाता जानती है कि अब से बाहर की दुनिया में दिव्यनाथ, ज्योति, नीपा, तुली, बिनी, बैंक के साथी लोग और अन्दर की दुनिया में व्रती—सिर्फ़ व्रती ही क्यों, समु की माँ, नंदिनी—इन सबके साथ दुःख बाँटकर घुटकर जीती हुई वह, यही उसकी कालकोठरी होगी । अब से वह बिलकुल अकेली हो जायेगी, बिलकुल अकेली! कोई दरवाज़ा खोलकर उसके नितांत एकाकीपन को तोड़कर नहीं पूछेगा : 'आप व्रती चैटर्जी की माँ हैं ?'

लेकिन नंदिनी ने हाथ नहीं हटाया । थोड़ी चुप रही, फिर हिचकिचाते, झिझकते हाथों से उसकी उँगलियों को छुआ । सुजाता ने हाथ हटा लिया ।

---

1. कुछ भी तो नहीं ।

वह कृतार्थ हो गयी—नंदिनी ने उसके हाथों को छुआ है।

'मैं व्रती से प्यार करती थी।'
'व्रती ने तुम्हारी बात मुझसे कही थी।'
'कही थी?'
'हाँ, सोलह जनवरी को।'
'आश्चर्य है!'
'क्या?'
'पहले नहीं कहा?'
'नहीं।'
'मुझे लगा था कि व्रती आपको ही बतायेगा। घर में और किसी से उसे लगाव नहीं था।'
'व्रती का?'
'आप इतना हैरान क्यों हो रही हैं?'
'यह ठीक है कि व्रती औरों के इतना नज़दीक नहीं था, लेकिन...।'
'लेकिन इसमें हैरान होने की क्या बात है? पिता, बहन, भाई होने से ही क्या उनसे प्यार हो जाना ज़रूरी हो जाता है? उनकी तरफ़ से कोई प्रतिक्रिया, संकेत न मिलने पर भी?'
'मुझे नहीं पता, नंदिनी। व्रती को मैं कितना कम पहचानती थी—वह आज समझ में आता है, तब नहीं समझती थी।'
'समझने की कोशिश की थी?'

सुजाता ने मनाही में सिर हिलाया; झूठ उससे बोला नहीं जाता।

'आप लोग, आप लोगों की पीढ़ी ही ऐसी है। आप लोग सब-कुछ चाहते हैं—प्यार, विश्वास, आज्ञा-पालन। क्यों चाहते हैं, कैसे चाहते हैं?'
'नहीं चाहना चाहिए?'
'नहीं, चाहने का अधिकार आप की पीढ़ी ने गँवा दिया है। लेकिन हम लोगों में से कई ऐसे थे जिनका उनके माँ-बाप से अलग तरह का

सम्बन्ध था। अंतु, दीपू, संचयन, ऑल हैपी लाइव्स,[1] फिर भी वे लोग हमारे साथ आये थे। कैसे आये थे, यह कौन बतायेगा ?'

'तुम्हीं बताओ न, नंदिनी।'

'व्रती की बात ही लीजिये। अपने बाप से उसका कोई परिचय ही नहीं था। पहले जब प्यार, अपनत्व का इशारा पिता की तरफ़ से मिल सकता था, तब बाप ने रिश्ता क़ायम करने की कोशिश ही नहीं की। वह आपको भी पायदान की तरह इस्तेमाल करते थे, व्रती कहा करता था !'

'व्रती ने यह कहा था ?'

'नहीं तो मुझे कैसे पता चलता ?'

'व्रती ने कहा था ?'

'[illegible]'

सुजाता का चेहरा लाल हो गया। फिर स्वाभाविक हो आया। इस सबका मतलब व्रती समझता था, इसीलिए माँ पर उसका इतना स्नेह था। जब वह छोटा था तो एक दिन सुजाता को चुपचाप रोते हुए देखकर छः साल के व्रती ने कहा था : मैं तुम्हें एक शेर-शिकारी छापे वाली साड़ी ख़रीद कर दूंगा।

'वह कहता था, उसके पिताजी घूस देकर दूसरी कम्पनी के ग्राहक फोड़ लाते हैं। ही इज़ वन सी०ए०,[2] जिनके मरने पर कोई आँसू नहीं बहायेगा। कहता था, आपकी तरह की पत्नी और चार बच्चे रहने पर भी वह लड़कियों को लेकर हमेशा...एक टाइपिस्ट लड़की के लिए फ़्लैट किराये पर लेकर रखा है। व्रती ने उनको, इस बात को लेकर चेतावनी दी थी, यह आपको मालूम है ?'

'कब ?'

'नवम्बर के महीने में, अपने मरने के दो महीने पहले।'

अब सुजाता को समझ आया, क्यों कुछ महीनों से व्रती दिव्यनाथ के सामने नहीं पड़ता था; क्यों दिव्यनाथ उसका नाम भी मुँह पर नहीं लाते थे।

---

1. सभी की ज़िन्दगी ख़ुशियों से भरपूर थी।
2. एक ख़ास ही क़िस्म के चार्टर्ड एकाउंटेंट हैं।

एक बार भी पहले की तरह नहीं पूछते थे : 'तुम्हारा छोटा लड़का क्या इसी घर में रहता है ?'

'उसके भाई-बहन अपने पिता के प्रशंसक थे। व्रती कहता था, वे लोग इंसान नहीं हैं। उसकी बड़ी बहन कामोन्मत्त है; छोटी बहन ग्रंथियों से भरी हुई बदतमीज़ लड़की है, बड़ा भाई एक दलाल है...यह सब उसके मुँह से ही सुना है। सिर्फ़ आपके ऊपर...आप से वह प्यार करता था। इसीलिए नहीं गया।'

'कहाँ नहीं गया ?'

'उसको घर पर नहीं रहना था। लगता है, सिर्फ़ आपके ही लिए वह जा नहीं रहा था। लेकिन उन्नीस जनवरी को उसकी और मेरी चले जाने की बात थी, और भी बहुतों के साथ।'

'कहाँ ?'

'बेस पर[1]।'

'व्रती घर छोड़कर चला जाता ?'

'अगर ज़िन्दा रहता तो जाता। अनिंद्य चुग़ली नहीं करता तो ज़रूर जाता। व्रती जैसों का भ्रम अपने घरों से ही टूटना शुरू हुआ था। फिर...।'

'लेकिन समु के बाबूजी तो व्रती के बाबूजी के तरह नहीं थे।'

'समु का भ्रम किसी और कारण से टूटा था। समु तो कहता था कि पहले अपने बाप को मारेगा। ग़ुस्से से आग-बबूला होकर कहता था। बापू टेक्स एवरी थिंग लाइंग डाउन[2]। मछलीवाले से लेकर मुहल्ले के मदमत्त लोग, सब उन पर रौब डालते हैं। सौदा खरीदकर कोई दाम नहीं देता था। उधर अंतु, दीपू, संचयन—ये लोग अपने पिताओं की श्रद्धा करते थे। इन लोगों को समझना बहुत मुश्किल है।'

'मेरे बारे में व्रती और क्या-क्या कहता था ?'

'बहुत-बहुत-सी बातें करता था—हर समय नहीं, बीच-बीच में। इसी बात को लीजिये, व्रती को अड्डे पर जाना था पन्द्रह जनवरी को। वह

1. अड्डे पर।
2. बापू हर बात को बिना विरोध के सह लेते हैं।

मुलतवी करते-करते उन्नीस तक ले गया। सिर्फ़ मैं उसके जन्म-दिन के बारे में जानती थी—उसका जन्म-दिन आपके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह इन सब बातों पर विश्वास नहीं करता था। फिर भी आपके लिए जाने का दिन टालता गया। मैंने उसे खूब सुनायीं थीं !'

'उसने क्या कहा ?'

'हँस दिया। जिस बात का जवाब देना नहीं चाहता था, वहाँ वह हँस देता था। उसने कहा, शायद मैं तेरी तरह मजबूत कलेजे का नहीं हूँ।'

'और क्या कहता था व्रती ?'

'कहता था, आप बहुत अच्छी हैं। कहता था, आप भी नितांत भोली हैं, लेकिन आपको समझाया जा सकता है। आप से उसे कोई नाराज़गी नहीं थी। नेशनल स्कॉलरशिप मिलने पर पहले वह नौकरी-वौकरी की बात सोचता था। तब कहता था कि नौकरी मिलने पर आपको लेकर वह कहीं चला जायेगा, आखिर में हालाँकि यह सब-कुछ वह नहीं कहता था।'

तब क्या सुजाता का जकड़ने वाला स्नेह ही परोक्ष रूप में व्रती की मौत के लिए ज़िम्मेदार सिद्ध हुआ ?

उसको दुःख होगा, इसीलिए व्रती उस दिन कलकत्ता में था ? नहीं तो व्रती अड्डे पर चला गया होता !

'कहाँ है अड्डा ?'

कालकोठरी में रहने से आदमी की अनुभूतियाँ छुरी की नोक की तरह पैनी हो जाती हैं।

नंदिनी ने कहा, 'अपने-आपको दोषी मत ठहराइये, शायद अड्डे में भी व्रती मरता, किसी तरह भी मरता, हालाँकि अगर अनिंद्य धोखा न देता...।'

'फिर भी लगता है...।'

'अनिंद्य ने दग़ा दिया—यही है असल बात। हमलोग किसी और दल को छोड़कर नहीं आये थे। हमारे मन पहले ही परिवर्तित हो चुके थे, अनिंद्य दूसरा दल छोड़कर आया था। कह-सुनकर किसी की सलाह-

मशविरे से आया था। समु और अन्य लोग उस दिन महल्ले में लौटेंगे, ऐसा ठीक हुआ, बाद में फ़ैसला बदल गया। हम लोग ही हमेशा संगठन की कमज़ोरी के लिए भुगतते हैं। जो संगठन बिलकुल अंडरग्राउंड होते हैं, उसमें यू ऑलवेज़ डिपेन्ड ऑन अदर्स[1]। अनिंद्य को पहले समु आदि को जाने के लिए मना करना था, फिर यही ख़बर व्रती को देनी थी।'

'व्रती इसीलिए घर पर ही बैठा था ?'

'हाँ ! लेकिन अनिंद्य ने समु वग़ैरह से कुछ भी नहीं कहा और महल्ले में औरों को बता आया कि वे लोग आने वाले हैं। ख़बर देकर वह चला गया, लौटकर फिर नहीं आया। सीधे कलकत्ता के बाहर चला गया। मुझे शाम को लालटू से मिलना था। जब मुझे पता लगा, समु और दूसरे लोग महल्ले में लौट गये हैं तो मैंने व्रती को ख़बर की। व्रती ने इसके बाद के निर्देशों की प्रतीक्षा नहीं की, ख़ुद ही उनको आगाह करने चला गया।'

'तुम्हें...तुम्हें कैसे पता लगा ?'

'मुझे सुबह पता लगा था—पार्थ का जो भाई उसी रात भाग गया था उसी ने मुझे ख़बर दी थी।'

'तब तुम...।'

'उसी दिन सुबह मुझे गिरफ़्तार कर लिया था।'

'उसी दिन सुबह ?'

'हाँ, अनिंद्य ने हमारे पूरे ग्रुप को ही पकड़वा दिया था।'

'वह अब कहाँ है ?'

'कौन ? अनिंद्य ? अनिंद्य बाहर है।'

'बाहर ?'

'किसी दूसरे राज्य में।'

'फिर ?'

'फिर जेल में रही। तब लगता था...।'

'क्या ?'

'अनिंद्य की हत्या करूँगी। अब ऐसा नहीं लगता।'

---

1. आपको सदा दूसरों पर भरोसा करना पड़ता है।

'अब क्या लगता है ?'

'नहीं मौसी, मैं बदली नहीं हूँ। लेकिन शायद' अनिंद्य से ही नहीं, सभी कुछ के विरुद्ध फिर से लड़ना होगा।'

'फिर से, नंदिनी ?'

'व्हाई नॉट ?'[1]

'क्यों, बताओ...तब तो तुम्हें भी...।'

'आप समझ नहीं रही हैं। यू लव टू इंनटेंस्ली।[2] उसके बाद जेल, जिरह, आँखों पर हज़ार पॉवर का बल्ब, दे ट्राई टु ब्रेक यू...देन यू फ़ाइंड यूअरसेल्फ़।[3] मैं और कभी, जैसा आप सोच रही हैं वैसी स्वाभाविक, सामान्य नहीं हो पाऊँगी। इसकी वजह सिर्फ़ व्रती ही नहीं है। अगर वह ज़िन्दा रहता तो शायद हम लोग शादी करते, या शायद नहीं भी करते। क्या करते, यह बहुत-सी दूसरी बातों पर निर्भर था। पता नहीं, क्या होता! उसके बाद क्या-कुछ हुआ! उसके बाद...सब बातें मैं आपको नहीं बताऊँगी, यू लूज़ टेस्ट फ़ॉर मैनी थिंग्स[4]।'

'व्रती से तुम बहुत प्यार करती थीं ?

'तब ऐसा ही लगता था। अभी भी ऐसा ही लगता है। सुना है, समय सब-कुछ भुला देता है। शायद किसी दिन भूल भी जाऊँ, या फिर उसका चेहरा ही धुँधला पड़ जाये! सोचते ही डर लगता है।'

'हाँ!'

'आपको भी ?'

'हाँ!'

'पता नहीं, भूलूँगी या नहीं। पता नहीं, धीरे-धीरे याद कम होने लगेगी या नहीं। लेकिन सिर्फ़ व्रती ही तो नहीं। जब सोचती हूँ, सो मैनी डाइड फ़ॉर व्हॅट?[5] जानती हैं, जेल से बाहर आकर सबसे पहले कौन-सी

---

1. क्यों नहीं ?
2. आप बहुत भावाधिक्य से प्यार करती हैं।
3. वे आपको तोड़ देने की हरचन्द कोशिश करते हैं—तब आप अपने-आपको पहचान पाते हैं।
4. बहुत-सी चीजों का आप स्वाद खो बैठेंगी।
5. इतने लोगों ने किस बात पर प्राण दिये ?

बात खुल गयी थी ?'

'क्या ?'

'जब मैंने देखा सब-कुछ सामान्य है। बहुत अच्छा! जैसे तो जो होना था हो गया, अब सब शान्त हो गया है, ऐसा एक वातावरण छाया है चारों तरफ़—तब छाती फट गयी थी।'

'लेकिन अब तो सचमुच सब-कुछ शांत है, नंदिनी।'

'नहीं!' नंदिनी चीख़ उठी; सुजाता अवाक् रह गयी।

'शांत नहीं हुआ, नहीं हो सकता। तब भी कुछ शान्त, निश्चल नहीं था, अब भी नहीं है। डोन्ट से[1], सब शांत हो गया है। आफ़्टर ऑल यू आर व्रतीज़ मदर[2]! सब शांत हो गया है, ऐसा आपको कहना या विश्वास नहीं करना चाहिए। कहाँ से ऐसा आत्म-संतोष आता है ?'

'कुछ भी शान्त नहीं हुआ ?'

'नहीं, नहीं हुआ। व्हाई डिड दे डाई ?[3] क्या ख़त्म हो गया है ? लोग सुखी हैं ? राजनीति का खेल ख़त्म हो गया है ? इज़ इट ए बेटर वर्ल्ड[4] ?'

'नहीं ?'

'हज़ारों लड़के बिना मुक़दमे के, न्याय की जेलों में सड़ रहे हैं! फिर भी आप कहती हैं कि सब शान्त है ?'

नंदिनी बार-बार हताशा से सिर हिलाती रही। कहने लगी : 'सब मुझे यही समझाते हैं। माँ कहती हैं, तू तो अब और कुछ नहीं करेगी, फिर शादी क्यों नहीं करती ? घर-गृहस्थी क्यों नहीं बसाती ?'

'तुम क्या...?'

'अस्वास्थ्य के कारण छोड़ा है। नहीं तो शायद छोड़ते नहीं। मैं मरना

---

1. ऐसा मत कहिये।
2. आख़िरकार आप व्रती की माँ हैं।
3. वे सब लोग मरे क्यों ?
4. क्या दुनिया बेहतर हो गयी है ?

नहीं चाहती थी; बाहर न आने पर शायद इलाज नहीं होता। अभी भी मैं नज़रबन्द हूँ।'

'किस चीज़ का इलाज ?'

'ओह, आप समझीं नहीं ? तेज़ रोशनी के सामने लगातार कभी बयालीस, कभी बहत्तर घंटे रहने की वजह से मेरी आँखों की नसें मर गयी हैं। मैं दाहिनी आँख से देख नहीं पाती। देखने से पता नहीं चलता।'

'नहीं, मुझे तो पता नहीं लगा।'

'एक आँख बिलकुल खराब हो चुकी है।'

'अब तुम क्या करोगी ?'

'पता नहीं। मतलब, आँखों का इलाज कराऊँगी, इतना जानती हूँ। और क्या करूँगी, यह नहीं जानती। लेकिन माँ के कहे अनुसार संदीप से शादी नहीं करूँगी।'

'संदीप कौन ?'

'एक लड़का है। अच्छी नौकरी करता है। आजकल शायद हमारी तरह लड़कियों से शादी करना धीमान राय[1] की कविता लिखने की तरह एक फ़ैशन बन गया है। नहीं तो वह मुझसे क्यों शादी करना चाहता है, समझ में नहीं आता !'

'आखिर क्या करोगी तुम, नंदिनी ?'

'कहा तो, नहीं पता। अभी किसी-किसी मामले में अपने-आपको बहुत विक्षुब्ध, डिस्टर्ब्ड और असंयत पाती हूँ। सब—अजनबी, अन-पहचाने लगते हैं। अपने को किसी चीज़ के साथ आइडेंटिफ़ाई नहीं कर पाती। पिछले कुछ सालों के अनुभव, दे हैव मेड मी अनफ़िट फ़ॉर दिस सो-काल्ड नॉर्मेल्सी।[2] जो, आप लोगों को सामान्य लगता है, मुझे असामान्य लगता है। क्या करूँ, बताइये तो ?'

'नहीं, मुझे कुछ नहीं कहना है।'

'हम लोगों के दोस्तों में से कोई भी ज़िन्दा नहीं है—जिन लोगों की

---

1. एक आधुनिक कवि जो सतही फ़ैशनेबल राजनीतिक कविताएँ लिखा करते थे—उनका छद्मनाम।
2. इस अनुभवों ने मुझे इस तथा-कथित सामान्यता से एकदम विमुख कर दिया है।

बातें हर समय मन में घुमड़ती रहती हैं, जो हर समय याद आते हैं, उनकी बातें कर सकूँ—ऐसा कोई भी नहीं है।'

'तुम्हारे घर में तो सभी हैं।'

'वो तो हैं। वह मेरा घर नहीं है। मेरे किसी रिश्तेदार का घर है। माँ, बाबूजी कलकत्ता में नहीं रहते।'

'उनके साथ...।'

'उनके लिए भी मैं एक समस्या हूँ, यह समझती हूँ। कौन जाने, क्या करूँगी! शायद आप सुनेंगी...!'

नंदिनी हँसी। सुन्दर उजली हँसी। कहने लगी : 'शायद आप सुनेंगी, फिर से पकड़कर ले गये हैं। क्या होगा, कैसे बताऊँ ?'

सुजाता बैठी रही। अभी बैठे रहने का समय नहीं है। संध्या उतर रही है। जाड़ों की शाम ज़रा जल्दी ही आ जाती है। अब उसे घर लौटना चाहिए। लेकिन पैर पत्थर हो रहे हैं।

'आप अब जायेंगी नहीं ?'

'हाँ, अब जाऊँगी।'

'अब फिर कभी मुलाक़ात नहीं होगी ?'

'तुम क्या कहीं जाओगी ?'

'नहीं, यहीं रहूँगी। लेकिन फिर मिलकर क्या होगा ?'

सुजाता ने हामी भरी। कुछ भी नहीं होगा। क्योंकि नंदिनी की और उसकी ज़िन्दगी समानान्तर रेखाओं की तरह है। मिल सकें—ऐसी एक भी संभावना नहीं दीखती।

'एक चीज़ तुम्हें दूँ ?'

'क्या ?'

'यह तुम्हीं रखो।'

व्रती की फ़ोटो। हमेशा उसके बैग में रहती है, उसके पास-पास।

नंदिनी ने फ़ोटो ले लिया। तख़्तपोश के ऊपर रखा। उसके बाद कहा : 'मेरे पास और कुछ भी नहीं है, न था।'

'मेरे पास और भी हैं। यह तसवीर, शायद किसी ने कॉलेज में खिंची थी।'

'जानती हूँ। अनिंद्य ने खींची थी।'

'चलूँ, नंदिनी। तुम...तुम ठीक से रहना। कभी कोई ज़रूरत पड़े तो खबर देना।'

'दूँगी।'

नंदिनी ने हँसकर ही कहा, लेकिन सुजाता ने जान लिया कि नंदिनी कभी खबर नहीं देगी। नंदिनी को भी पता था कि वह ख़बर नहीं देगी। दोनों एक-दूसरे के लिए फिर से अजनबी बन जायेंगी। सिर्फ़ सुजाता की दुनिया बदल जायेगी। पहले की तरह वहाँ कुछ भी नहीं होगा। क्यों उस दिन व्रती नीली कमीज़ पहने निकल गया? क्यों एक हज़ार चौरासीवीं लाश बन गया? आज दिन-भर में इस पहेली का उत्तर टुकड़ों-टुकड़ों में जान लिया। सुजाता का बाक़ी जीवन उन टुकड़ों को मिलाने में ही बीत जायेगा!

'आपको दरवाज़े तक पहुँचा आऊँ, रोशनी नहीं है बाहर।'

नंदिनी टटोल-टटोलकर दरवाज़े तक गयी। उसकी चाल देखकर लगा, शायद उसकी दोनों आँखों की दृष्टि ही कम हो गयी है।

'बाहर आओगी?'

'नहीं, मैं बाहर नहीं आ पाऊँगी। घर में ही नज़रबन्द हूँ। इसके अलावा अकेले भरोसा भी नहीं होता।'

'तब रहने दो।'

सुजाता ने उसके माथे, चेहरे पर हाथ फेरा। बड़ी इच्छा हुई कि उसे गले

से लगा ले, व्रती को जैसे नहीं लगा पायी थी। स्वाभाविक, जीवंत भूख! जिसके वशीभूत हो समु की माँ ने श्मशान में कहा था : 'ऊ का हमार छाती में लगाई देओ। ऊ का छाती में लइके हमका अव्वै शान्ति मिलि है। हम अऊर नाहीं रोइब।'

'एक दिन मैं और व्रती वातें करते-करते आपके घर तक पैदल चले आये थे। व्रती ने कहा था, एक दिन आपसे मिलवायेगा। वहुत दिन पहले की वात है।'

सुजाता ने सिर हिलाया। 'नहीं नंदिनी, वहुत दिन नहीं हुए। शायद चार ही वरस हुए होंगे। लेकिन वरसों के हिसाव से क्या होगा—दूसरे हिसाव से वहुत समय वीत गया—उन सामान्य दिनों के वाद, जिन दिनों के अन्त में एक वार व्रती की माँ से मिलकर आया जा सकता था। उन दिनों के वाद कितने ही आलोक-वर्ष वीत गये हैं!'

सुजाता ने धीरे से कहा : 'चलूँ।'

नंदिनी ने कुछ नहीं कहा। पीछे मुड़ी—मैली, अँधेरी दीवार पर हाथ रखा, फिर धीरे-धीरे अन्दर की तरफ़ वढ़ने लगी। उसका हर क़दम उसे सुजाता से दूर ले जाता रहा। सुजाता वाहर निकल आयी—कलकत्ता की सड़क पर!

□ रात □

जाड़ों की शाम वहुत जल्दी ही उतर आती है, इसलिए इतना अँधेरा है। और अँधेरा है, इसलिए सुजाता के हर कमरे की रोशनी इतनी तेज़ है। पिछले कुछ दिनों से सुजाता ने बैंक से घर आकर खिड़की के शीशों को साबुन के पानी से साफ़ किया है, इसीलिए भी रोशनी इतनी चमक रही है। कुछ दिन पहले वारिश हुई थी। कल भी थोड़ी-सी बौछार पड़ी है—इसलिए दो-एक फ़तिंगे इतनी ठंड में भी वाहर से खिड़की के शीशों पर सिर पटक रहे हैं, रोशनी के दायरे में घूम रहे हैं। ऐसा ही होता आया है। सिर्फ़ जो-जो सामान्य है, नंदिनी के लिए वही-वही असामान्य रहेगा। नंदिनी के शरीर पर सिर्फ़ चादर पड़ी थी। व्रती जाड़ों में फटा-पुराना नीला शाल ओढ़ना पसन्द करता था।

दिव्यनाथ वहुत देर से शायद दरवाज़े तक आ-जा रहे थे। अव वह पहले की तरह कर्कश स्वर में चिल्ला उठे : 'घर लौटने का समय हो गया? हद है!'

सुजाता कुछ नहीं वोली। दिव्यनाथ और उस टाइपिस्ट लड़की के सामने व्रती कव हुआ था—सुजाता ने मन-ही-मन इसका हिसाव लगाया। हाँ,

उसी समय से व्रती ने अपने स्कॉलरशिप का पैसा घर में देना शुरू किया था। सुजाता आज समझी कि व्रती उसी समय घर छोड़कर नहीं गया तो सिर्फ़ उसी के लिए। व्रती, तूने मुझे कुछ क्यों नहीं बताया ? क्यों मुझ पर तेरा प्यार स्नेह में बदल गया था ? जैसे एक छोटी-सी लड़की पर उसके पिता का प्यार होता है !

सुजाता गलियारा पार कर धीरे-धीरे ड्राइंग रूम में घुसी—हर फूलदान में फूल सजाये हुए हैं। झलमल उजली रोशनी ! गहरे ख़ूनी रंग के गुलाब। हाय, लाल गुलाब के गुच्छों में, झलमलाती रोशनी में जिन्होंने अपना विश्वास गिरवी रखा था ! उन्होंने कब से वह विश्वास लौटा लिया है—फिर भी ये गुलाब इतने लाल हैं, रोशनी इतनी तेज़ है। धोखा-धड़ी ! नंदिनी और व्रती के साथ गुलाबों और रोशनी ने भी धोखा किया है। सुजाता ने सिर हिलाया।

बड़ी मेज़ को नीचे के बरामदे में निकाला गया है। स्कूल में पढ़ते वक़्त, बरसात के दिनों में कितने दिन यह टेबल निकालकर व्रती टेबल-टेनिस खेला करता था अपने दोस्तों के साथ। एक बार इसी बरामदे में व्रती और उसके दोस्तों ने रवीन्द्र-जयन्ती मनायी थी। उसका दोस्त बावलू एक ही चालबाज़ था। उतनी छोटी-सी उम्र में बावलू ने लिखा था : 'रवीन्द्रनाथ बहुत ग़रीब थे, इसीलिए आठवीं क्लास के बाद पढ़ना छोड़ दिया था और कविता लिखकर अपना गुज़ारा करते थे।' व्रती ने रवीन्द्रनाथ की कविता 'वीर पुरुष' पढ़कर सुनायी थी। उसके बाद कितने ही आलोक-वर्ष बीत गये हैं !

मेज़ के ऊपर झक-सी सफ़ेद चादर बिछी हुई है। मेज़ के एक पाये की लकड़ी व्रती के जूतों की ठोकर से छिल गयी थी। मेज़ के ऊपर काँटा-चम्मच, नैपकिन, वाइन ग्लास, पानी, शीशे के गिलास, फ़ुल प्लेटें, कॉफ़ी के प्याले—सब सजे हुए हैं। इस घर की किसी भी चीज़ में व्रती नहीं है। कहीं नहीं है। व्रती के घर में, जिसमें वह पलकर बड़ा हुआ, ज़िन्दगी बितायी—उस घर में

व्रती को ढूँढ़ पाना इतना मुश्किल है !

सुजाता ने देखा, कालं पर लाल सुनहरे रंग के चेरी के फूल वाले प्याले ! ये नीपा के हैं। तो नीपा भी आयी है।

खाने के कमरे में घुसी। मेज़ पर संदेश के डिब्बे, रसगुल्ले की हँडिया, दही। वालडोर्फ़ और साविर का नाम छपा है डिब्बों पर। आज के लिए ख़ास आर्डर दिये गये थे।

साइड बोर्ड के ऊपर सॉस, विनेगार, मस्टर्ड, नमक, काली मिर्च, सलाद। बिनी ने कट-ग्लास के डूँगों में कतरकर सिरके में हरी मिर्च भिगोयी थी।

'हेम !'

हेम दौड़कर आयी।

'एक गिलास शिकंजवीन।'

हेम चली गयी।

दिव्यनाथ अन्दर आये—प्रौढ़, भोगी, मांसल, चेहरा। आज पहली बार सुजाता को लगा—गरदन के पास इतनी ज़्यादा छँटाई के साथ वाल काटना, मुँह में स्नो लगाना, सचमुच ही बहुत कुत्सित लगता है। लगा, अगर दिव्यनाथ चिकन का कुरता और किनारी वाली शाल न भी पहनते तो भी चल जाता। जूते आज ही के लिए खरीदे गये हैं, यह देखकर ही पता लग जाता है। दिव्यनाथ ने बहुत क़ीमती बनियान पहन रखी थी, यह सुजाता को पता था।

'क्या सोचती हो तुम ? जानती हो, पचास लोगों को बुलाया है !'

'जानती हूँ।'

'मतलब ?'

'बन्दोबस्त किया हुआ था सब। नीपा आयी है। तुम घर पर ही थे। सब बन्दोबस्त हो ही गया है जब, तब और बात मत बढ़ाओ।'

'बात मत बढ़ाओ ! तुम समझती क्या हो ?"

'तुम—अगर—इसी—समय—यहाँ से—चले न जाओ—तो मैं घर से—निकल जाऊँगी—और कभी नहीं लौटूँगी।'

सुजाता ने रुक-रुककर कहा। उसको घिन लग रही है, बेहद घिन लग रही है। दिव्यनाथ और वह टाइपिस्ट लड़की; दिव्यनाथ और सुजाता की रिश्ते की ननद; दिव्यनाथ और उनकी एक मुँहबोली भाभी!

दिव्यनाथ के गाल पर जैसे किसी ने तमाचा जड़ दिया। चौंतीस साल के विवाहित जीवन में सुजाता एक बार भी इस तरह अपने पति से नहीं बोली थी।

'तुम सारा दिन कहाँ रहीं, क्या यह भी पूछ नहीं सकता?'

'नहीं।'

'व्हॅट?'[1]

'दो साल पहले तक, पिछले बत्तीस साल से तुम अपनी शामें कहाँ बिताते थे, किसको लेकर पिछले दस साल से टूर पर जा रहे हो, क्यों तुम अपनी पुरानी टाइपिस्ट के लिए मकान का किराया देते रहे—यह सब मैंने तुमसे कभी नहीं पूछा। तुम मुझसे एक बात भी नहीं पूछोगे, किसी दिन भी नहीं पूछोगे!'

'गॉड!'[2]

'जब उम्र कम थी, तब मैं समझती नहीं थी। उसके बाद तुम्हारी माँ ने तुम्हारे हर पाप, हाँ, पाप को ढकने की कोशिश की, इसलिए पूछने की इच्छा भी नहीं हुई कभी। उसके बाद आई हैड नो इंटरेस्ट टु नो।[3] लेकिन तुम जिस तरह अपने घर, अपने परिवार से चोरी-चोरी बाहर समय बिताते थे, मैंने वह नहीं किया। और भी सुनना चाहते हो?'

'तुम...आज...?'

'हाँ, व्हाई नॉट? आज क्यों नहीं? जाओ।'

'जाऊँ?'

'हाँ, जाओ!'

---

1. माने? 2. हे परमात्मा! 3. कुछ भी जानने में दिलचस्पी नहीं रही।

सुजाता ने 'जाओ' शब्द आदेश के स्वर में कहा। दिव्यनाथ गरदन पोंछते-पोंछते निकल गये।

आज के बाद सुजाता नहीं रहेगी यहाँ। अब नहीं रहेगी। जहाँ व्रती नहीं है, वहाँ वह नहीं रहेगी। व्रती के रहते अगर वह एक दिन भी दिव्यनाथ से इस तरह बात कर सकती! कह-सुनकर व्रती को लेकर निकल जाती, तब भी शायद कुछ बदल नहीं सकती थी, बस, सिर्फ़ व्रती के मन के क़रीब आ जाती। व्रती को यह मालूम हो जाता कि जिस सुजाता को उसने जाना है, वह ही पूरा सच नहीं है। व्रती बिना जाने ही चला गया।

हेम अन्दर आयी, नीबू वाला शरबत दिया। सुजाता ने एक घूंट पिया, फिर कहा: 'गरम पानी रख हेम, नहाऊँगी। लेकिन खुद पानी ढोकर नहीं लाना। नत्थू है न?'

'नत्थू बरफ़ लाने गया है पड़ोस में।'

'क्यों, घर में बरफ़ नहीं जमी?'

'नहीं, मिस्त्री ने आकर कहा, पता नहीं क्या खराब हो गया है फ्रिज का। साठ रुपये लगेंगे। वह भी अभी नहीं हो सकता।'

'फिर पानी रहने दे।'

'अभी न नहाओ, बाद में नहा लेना।'

'ठीक है, बाद में नहाऊँगी।'

'सारा दिन कुछ खाया?'

'नहीं, मन नहीं हुआ।'

'अब ऊपर जाओगी न?'

'हाँ।'

'कुछ खाओगी?'

'नहीं। नीपा कब आयी?'

'सुबह। उन्होंने तो यहीं खाना खाया।'

'लड़की को लायी है?'

'नहीं, उसके इस्कूल में जाने क्या हो रहा है।'

'कमरे किसने सजाये ?'

'क्यों, बहूरानी ने।'

'कप-प्लेट सब किसने निकाले ?'

'स—ब छोटी दीदी ने किया है। तुम चली गयीं तो मुझे खूब डांटा-फटकारा। मैं काम नहीं करती, बैठी-बैठी रोटियाँ तोड़ती हूँ, छोटे भैया का नाम भुना कर खा रही हूँ, वगैरह-वगैरह।'

'डाँटा क्यों ?'

'नहाने का पानी उबलकर गरम हो गया था। उसके बाद और भी क्या-क्या पीस कर उबटन बनाने को कहा था। मैंने कहा, मुझे इतना कहाँ याद रहता है ?'

'फिर ?'

'उसके बाद घर-बर साफ़ करने लगी। बहूरानी ने कहा, 'मैं किसलिए हूँ ? एक दिन तुम किसी और पर ज़िम्मेदारी देकर चैन नहीं ले सकतीं ?' बस, इसके बाद दोनों में खूब झगड़ा हुआ। क्या-क्या बोल रही थीं, पता नहीं। अँगरेजी में झगड़ रही थीं दोनों।'

'तू क्यों सुनने गयी ?'

'लो, और सुनो। मैं कभी सुनती हूँ उनकी बातें ! ऐसा चिल्ला रही थीं दोनों कि सड़क पर आदमी इकट्ठे हो गये थे।'

'फिर ?'

'उसके बाद छोटी दीदी ने जाकर बड़ी दीदी को फ़ोन किया। उन्होंने आकर बहूरानी को मनाया। फिर बहूरानी ने सब काम पूरा किया। फिर सबने मिलकर खूब गप्पें मारीं, खाना खाया। उसके बाद तो भाई, सब ठीक-ठाक हो गया। नीचे जाने कहाँ गयीं और पता नहीं, कहाँ से जूड़ा बँधवाकर आयीं। खूब हँस-हँस कर आ रही थीं बाहर से।'

'तुली की सहेली जूड़ा बनाने नहीं आयी ?'

'नहीं।'

'अच्छा, तू अब जा।'

हेम चली गयी। सुजाता कमरे से बाहर निकल आयी। रेलिंग पकड़-पकड़

कर ऊपर चढ़ने लगी। तकलीफ़ हो रही है; बेहद तकलीफ़ हो रही है। व्रती होने के एक दिन पहले कितनी तकलीफ़ थी! और किसी के जन्म के बारे में इतना कुछ याद नहीं है। सिर्फ़ व्रती की बात ही क्यों याद है? व्रती उसके मन में एक दर्द बनकर ज़िन्दा रहेगा—सिर्फ़ इसीलिए? सीढ़ियों की इस जगह पर ही व्रती उस दिन...पेडू में दर्द! सोचा था, तुली की शादी के बाद ही ऑपरेशन करायेगी। अब लग रहा है, पहले ही कराना पड़ेगा। आज का दिन कट जाये किसी तरह तो। कल सोचेगी कि क्या करना ठीक होगा।

आज के दिन एंगेजमेंट रखने की उसकी क़तई इच्छा नहीं थी। लेकिन, उसकी राय पूछनी कभी किसी ने ज़रूरी नहीं समझी। टोनी कपाड़िया की माँ के गुरुजी अमेरिका में रहते हैं। स्वामीजी ने ही यह तारीख़ तय की थी। टोनी माँ का कहा नहीं टालता। माँ के पैसे से वह इतना बड़ा धन्धा कर रहा है।

दिव्यनाथ बड़े ख़ुश हैं—दोनों उन्हीं की तरह मातृभक्त हैं। माँ की हाँ में हाँ मिलाता है। लेकिन मातृभक्त होना उसका अतिरिक्त गुण है। होने वाले दामाद के रूप में वह वैसे भी वांछनीय है। टोनी की कोशिशों से ही दिव्यनाथ को शॉ वेन्सन का ऑडिट का काम मिला था। टोनी के बारे में दिव्यनाथ के मन में कमज़ोरी-सी है। इसके अलावा तुली उनकी सबसे चहेती बेटी है। तुली का स्वभाव, शक्ल—सब दिव्यनाथ की माँ की तरह है।

टाइपिस्ट लड़की वाली बात तुली को ही सबसे पहले पता चली थी, लेकिन वह जान कर भी अनजान बनी रही। उसके मन में बाप के प्रति कोई घृणा या अलगाव की भावना नहीं आयी। उलटे उस लड़की की उद्दंडता इतनी बढ़ गयी थी कि घर पर फ़ोन करके बताती थी कि आज शाम को मार्केट जाना है, दिव्यनाथ को ख़बर कर दी जाये। तुली ही फ़ोन उठाती थी, क्योंकि उस लड़की को पता था कि तुली के अलावा और कोई फ़ोन उठायेगा तो दिव्यनाथ को ख़बर नहीं मिलेगी। दिव्यनाथ ने ही टाइपिस्ट को तुली की बात बतायी होगी।

तुली अपने वावूजी को सब खबरें ठीक-ठाक पहुँचा देती थी। उस समय अपने वावूजी के लिए उसके मन में एक अजीब-सा अधिकार-बोध आ गया था। तुली की देख-रेख में दिव्यनाथ शाम होने से पहले अच्छे कपड़े पहनते थे। अपनी रखैल के साथ शाम विताकर आने के बाद तुली ही चिकन सूप और सलाद लेकर अपने पिता के पास दौड़ी जाती थी। एक सन्तोप और गर्व का अनुभव होता था उसे, जैसे उसकी दादी को होता था। 'मर्द हैं उसके वावूजी, शादी करनी हो तो ऐसे मर्द से ही करनी चाहिए!' यह बात तुली बड़े गुमान के साथ कहती थी। कहती थी, 'बड़े भैया तो कायर हैं, एक दम जोरू के गुलाम!'

ज्योति जब अपने वावूजी की बात ससुराल के किसी रिश्तेदार से सुन कर आया था और घर में इसे लेकर वहस, बातचीत हुई थी तो तुली ने ही कहा था: 'बड़े भैया, किसी को दोषी कह देना बड़ा आसान है। लेकिन जो लोग इस तरह छुटकारा ढूंढते हैं, उन लोगों के जीवन में ज़रूर कोई दुःख होता है। वावूजी को तो है ही।' उसने फिर कहा था: 'दादी जी कहती थीं कि दादाजी कोई शाम घर पर नहीं विताते थे तो क्या सिर्फ़ इसीलिए वह इंसान होने के नाते कुछ कम थे?'

और व्रती ने कुछ भी नहीं कहा था। तुली के रहते वह उसके साथ बैठकर खाना नहीं खाता था; जब तक वह घर पर रहती थी, उससे बात नहीं करता था। अब लगता है—व्रती को सब-कुछ मालूम था। शायद उसने सोचा हो कि सुजाता को इस बात से सबसे ज्यादा अपमानित अनुभव होना चाहिए, लेकिन सुजाता ही जब चुप है तो वह क्यों कुछ कहे? लेकिन शायद सुजाता के इस स्थिति को स्वीकार कर लेने के कारण उसे बहुत आघात पहुँचा था, इसीलिए घर छोड़कर चला जाना चाहता था। सुजाता व्रती को अब कभी भी यह नहीं समझा सकेगी कि वह क्यों चुप रहती थी। व्रती की बात सोचकर, कि वह बड़ा हो जाये, लिख-पढ़ ले, फिर व्रती को लेकर कहीं चली जायेगी—यही कुछ सोचकर वह सब सहती रही। व्रती यह बिना जाने ही चला गया। अगर जान जाता तो क्या अपनी राह बदल देता?

नहीं, कभी नहीं बदलता, यह वह जानती है—इसीलिए व्रती उसकी प्रिय संतान था। माँ के मन के इस हाहाकार को व्रती बचपन से ही समझने लगा था, इसलिए कहता था : 'बड़ा होकर मैं तुमको एक शीशे के मकान में रख दूँगा—जादुई शीशे के मकान में। माँ, तुम सबको देख पाओगी, लेकिन कोई तुम्हें नहीं देख पायेगा।'

दसवीं क्लास में 'मेरा प्रिय व्यक्ति' शीर्षक से 'मेरी माँ' नाम देकर लेख उसने लिखा था। वह व्रती! उँगली कटकर खून बहने पर डर जाता था, लेकिन दाँतों से होंठ भींचकर सह भी लेता था। बड़ी तीव्र इच्छा होती है, उसके चेहरे पर हाथ फेरकर उसको महसूस करे, उसकी आँख, नाक, होंठ भौंहों पर कोई कटा निशान, लेकिन पूरे चेहरे पर एक भी अक्षत जगह नहीं थी! उसकी हत्या ही सिर्फ़ उद्देश्य नहीं रहा होगा—हत्या को धीरे-धीरे विलम्बित लय में ले जाना, पैशाचिक उल्लास से धीरे-धीरे मौत के क़रीब जाते आदमी को तड़पता देखना!

उन हत्यारों को कोई सज़ा नहीं मिली—क्योंकि वे चतुर लोग हैं। इससे बढ़कर भयंकर परिणति किसी और समाज की हो सकती है क्या? जिन लोगों ने उन तरुणों को हत्या का मंत्र पढ़ाया था, उनको कोई पहचनवा नहीं देता? उन लोगों का बाल भी नहीं बाँका हुआ। इतना गूढ़, दुर्बोध्य, क्लिष्ट, जटिल क्यों है सब-कुछ?

क्या आज भी वे लोग सक्रिय हैं, भयानक रूप से सक्रिय? नंदिनी ने कहा था : 'कुछ भी शान्त नहीं है।' सुजाता ने सुना है : 'वे लोग हज़ारों तरह के प्रलोभन देते हैं, नाखूनों में सूई चुभोते हैं, आँखों के सामने हज़ार वाट के बल्ब जलाते हैं, देह के गुप्त स्थानों में बीभत्स यातनाएँ पहुँचाते हैं! कितने-कितने अत्याचार करते हैं, लेकिन फिर भी व्रती की तरह के लड़के झुकते नहीं; आज भी नहीं झुकते जब जेल की कस्टडी से पुलिस की कस्टडी में रहते हैं। यानी जेल से फिर पुलिस की हिरासत में। फिर फ़ाइल बन्द। पूर्ण विराम।' अजेय दत्त की माँ ने कहा था : 'अब हाबलू दत्त की फ़ाइल भी बंद कर सकते हैं।' हाबलू अजेय का ही एक उपनाम, उर्फ़ था।

संजीवन की दीदी को जेल वालों ने कहा था : 'तस्वीर दिखाना चाहती हैं ? अपनी माँ को ? एक महीने के बाद आइयेगा। रील में एक साथ बहत्तर तस्वीरें आयेंगी। आपके भाई का तो सिर्फ़ तीसवाँ नम्बर है। महीने-भर में रील ख़त्म होगी, तभी न तस्वीर निकलेगी !'

रेलिंग पकड़-पकड़कर ऊपर चढ़ रही है सुजाता। इसी रेलिंग पर से फिसल कर व्रती उतरता था। हेम दूध का गिलास लेकर सीढ़ियाँ चढ़ती थी और इसी बीच व्रती कितनी ही बार ऊपर-नीचे हो लेता था। बड़ा होकर भी कितनी बार इसी रेलिंग को पकड़कर उतरा करता था। लेकिन आज इस घर में व्रती कहीं भी नहीं है। वह आज भी है लेकिन दूसरी जगहों पर, फुटपाथ के लाल गुलाब के गुच्छों में, सड़क पर टँगी सजावटों में, रास्ते की रोशनी में, लोगों की हँसी में, समु की माँ के चेहरे में, नंदिनी की आँखों के नीचे की काली छाया में—कहाँ-कहाँ ढूँढती फिरे उसे सुजाता ? शरीर अब साथ नहीं देता—व्रती कहाँ-कहाँ बिखरा है—सुजाता उसे कहाँ-कहाँ ढूँढे ?

तुली के कमरे में घुसी। तुली और नीपा ने एक ही तरह की नीली बनारसी साड़ी पहनी हैं, एक ही तरह का स्टोल। दिव्यनाथ की तरफ़ से दोनों बेटियों और बहू को आज के दिन के लिए ख़ास तोहफ़े—तीन साड़ियाँ, तीन स्टोल, नौ सौ रुपयों से ऊपर मिलेंगे। नौ सौ रुपयों में समु की माँ जैसे कितनों के कितने अभाव दूर हो सकते हैं !

तुली और नीपा ने उनकी तरफ़ देखा—शीशे में तीनों का प्रतिबिम्ब सुजाता ने देखा। उसकी अपनी साड़ी मुसी हुई है; चेहरे पर थकावट, कच्चे-पक्के बाल अस्त-व्यस्त हो रहे हैं।

तुली और नीपा सजी-धजी सुन्दर ! दोनों के चेहरे ही सन्तुष्ट दीख सकते थे, लेकिन मेक-अप भी उनके चेहरे पर छाया के असंतोष को नहीं ढक पाया था।

'तुली, तेरे गहने।' सुजाता ने बैग खोलकर गहने विस्तर पर फैला दिये। फिर उनमें से कुछ उठाकर बैग में रख लिये।

'वे वाले उठा क्यों लिये ?'

'नीपा और विनी को जो-जो दिया है, वही तुझे भी दिया।'

'देखा दीदी ! मैंने कहा नहीं था ?'

नीपा ने साथ-साथ वड़े लाड़-भरे उदार स्वर में कहा : 'वे वाले भी तुली को दे दो, माँ। मेरी कोई माँग, या अधिकार नहीं है, सच।'

'तेरी माँग की बात ही कहाँ से उठती है ?'

'विनी को भी तो दिया है ?'

'व्रती रहता तो व्रती की वहू को देती। एक सुमन और एक तेरी बिटिया को दूंगी।'

'और दूसरे वाले ?'

'जो हो, कुछ करूँगी।'

तुली आग-बबूला होकर फुफकारती हुई बोली : 'हद है ! तुम्हें पता है, मुझे पुरानी क़िस्म के गहने—जवाहरात कितने पसंद हैं ! टोनी इनको मॉडल बनाकर नक़ली गहने वग़ैरह बनायेगा, एक्सपोर्ट करेगा, सब-कुछ तुम्हें मालूम है।'

'तूने कहा था, मैंने सुन लिया था। अब मैंने अपना मत बदल दिया है।'

'लेकिन आख़िर क्यों ?'

'ऐसे ही। तेरी दादी के दिये हुए गहने, तेरे पिताजी के दिये गहने, सभी तो दे दिये। ये मेरे पिताजी के दिये हुए हैं, मेरे पास रहें तो क्या ?'

'वाह, क्या हिसाब-किताब है !'

'ये मैं औरों को दूंगी, यही तय किया है।'

'ये भी न दो तो क्या ?'

'तेरी लेने की मरज़ी न हो तो फेंक दे। आज तेरे साथ ज़्यादा बात नहीं करूँगी तुली, तू चिल्ला मत। सुबह से बहुत चिल्लायी है।'

'किसने कहा ? हेम ने ?'

'हाँ, जितने दिन तुम इस घर में हो, हेम को एक शब्द भी नहीं

कहोगी। हेम को मैंने अपने ख़र्चे से रखा है; तुम्हारे बाबूजी ने नहीं। हेम ने व्रती को पाला था। वह जितने दिन है, अगर चाहो तो अच्छा वरताव करना, लेकिन बुरा वरताव नहीं कर सकतीं तुम। आज के दिन, व्रती के जन्म-दिन, वह सुवह से रो रही है—यह जानकर भी तुमने उससे जैसा वरताव किया, उसके लिए तुम्हें माफ़ नहीं किया जा सकता।'

'आज का दिन ! आज के दिन के लिए तुम्हारे मन में वहुत भावुकता है न ! तभी तो सारा दिन वाहर विताकर आयीं !'

'तारीख़ मुझसे पूछकर नहीं, टोनी की माँ से पूछकर तय की गयी है। मैं लौट आयी हूँ, यही काफ़ी समझना चाहिए।'

नीपा ने कहा : 'मेरी वात सोचकर ही आ जातीं, माँ। मैं तो रोज़ यहाँ दिन विताने के लिए नहीं आती।'

सुजाता हँसी और कहा : 'तू पूरे साल में कितने दिन मेरी वात सोचती है ? अपनी गाड़ी में तो दुनिया छान मारती है। अमित तो दौरे पर ही रहता है ज़्यादातर, और तू घूमती ही रहती है। ज्योति को टाइफ़ाइड हुआ; सुमन का जन्म-दिन हुआ; तू एक वार भी न आ सकी। मैं तुझे दोष नहीं देती। ऐसा ही होता है। लेकिन तू आयेगी, इसी आस में मैं वैठी रहूँ—ऐसी उम्मीद तुझे करनी चाहिए ?'

'तुम...।'

'और वातचीत नहीं तुली, मैं तैयार होने को चली।'

सुजाता अपने कमरे में चली गयी। आलमारी खोली। देह की एक-एक नस तड़क रही है, कह रही है : 'नहीं, नहीं, नहीं।' लेकिन आज की शाम का कर्तव्य निभाना ही पड़ेगा। कालकोठरी ! सुजाता ने एक-एक को यह वता दिया कि कोई कुछ भी करे, वह अपना कर्तव्य अविचल रूप से करती रहेगी। अपने को स्वयं ही कारादंड दिया है ! अव क्या कारागार तोड़कर वाहर निकला जा सकता है ? सफ़ेद पर सफ़ेद बूटी वाली किनारी की ढाका की साड़ी, और सफ़ेद ब्लाउज़ निकाला। आलमारी बंद की और वाथरूम में चली गयी।

दरवाज़े बंद कर, शॉवर खोलकर, वह ज़मीन पर बैठ गयी। चाहे

जितनी ठंड हो—दर्द के कारण ठंड महसूस नहीं होती। ठंडे पानी से शरीर जुड़ा गया। बर्फ़ की तरह ठंडा पानी! बर्फ़ की सिल्ली! बर्फ़ की सिल्ली पर तुरंत मरा हुआ, खून से लथपथ शरीर डालकर रखो तो खून बंद हो जाता है। ठंडा पानी! शीतल—व्रती की उँगलियों की तरह, व्रती के माथे की तरह, हाथों की तरह ठंडा और कुछ नहीं हो सकता। आज सारे दिन व्रती के साथ रही थी। व्रती की उँगलियाँ कितनी ठंडी, कितनी बर्फ़-सी ठंडी उसकी पलकें, बंद काली बरौनियाँ, ताँबई गोरा रंग, बाल—ठंडे बर्फ़ के पानी से भीगे ठंडे-ठंडे हिम-शीतल! आज सारा दिन व्रती के साथ थी। श्मशान में अँधेरी रात। पुलिस के पहरे में व्रती। श्मशान में रोशनी की बाढ़। दीवार पर इबारत। एक के बाद एक नाम। नाम, नाम, एल्यूमीनियम का दरवाज़ा धड़-से गिरा—व्रती! बिजली की आग के अंदर व्रती को सेंका जा रहा है। दिन-भर व्रती के साथ थी। 'राख लीजिये; अस्थियाँ लीजिये; मिट्टी से निकालिये; गया में फेंकनी होंगी।' व्रती के साथ थी वह सारा दिन।

शॉवर बंद किया। मशीन की तरह एक-के-बाद-एक काम करती रही। शिराएँ, नसें, हृदय, रक्त—सब जैसे चीख़-चीखकर कह रहे हैं: 'नहीं, नहीं, नहीं।' सुजाता ने शरीर पर पाउडर छिड़का; फिर गीले बालों को बाँधने लगी।

व्रती कहता था: 'कैसे हर समय तुम अपना कर्तव्य निभाती हो, माँ?' हर समय अपने कर्तव्य पूरे करने होते हैं, ऐसा ही उसे सिखाया गया था, और ऐसे ही वह खुद सीखती आयी थी। लेकिन आज लग रहा है, सब व्यर्थ था—ए विग वेस्टेज[1]। किसकी सहायता की उसने? किसी की भी नहीं? दिव्यनाथ, तुली, नीपा—किसी की नहीं।

दरवाज़ा खोलकर कमरे में आयी और शीशे के सामने खड़ी हो गयी।

---

1. एक निरर्थक प्रयास।

आँखों के नीचे काले दायरे ! होने दो। नंदिनी की आँखों के नीचे, क़रीब-क़रीब अंधी आँखों के नीचे, पहाड़ी की तलहटी जैसे ठंडी काली छाया है !

नंदिनी के पास और कभी नहीं जायेगी सुजाता, और कभी नहीं जायेगी समु की माँ के पास। व्रती को वह कहाँ ढूँढ़ती फिरेगी ? या फिर एक दिन ऐसा आयेगा कि वह स्वयं ढूँढ़ना वंद कर देगी !

सव-कुछ ख़त्म हो जाने के वाद एक दिन दिव्यनाथ लड़के-लड़कियों के सामने दहाड़ मारकर रोये थे, और वोले थे : 'तुम्हारी माँ की आँखों में आँसू नहीं हैं, अप्राकृतिक है वह स्त्री—उसकी आँखों में आँसू भी नहीं हैं।' क्या कभी ऐसा दिन आयेगा जव सुजाता जिस किसी के सामने रोयेगी, व्रती का नाम लेकर, उसकी वातें करेगी ? सोचकर ही डर लगता है। क्या अभी भी उसके असहनीय शोक के सीख़चों के अंदर व्रती क़ैद नहीं है ? अभी तो सव तरफ़ शांत नहीं है; जेल की दीवारें ऊँची हैं; नये-नये वाच-टॉवर वने हैं ! वंदियों के लिए वड़ा फ़ाटक तक नहीं खोला जाता। आधी रात को पुलिस-वैन आती है। रेडियो सिगनल देता है। ऊपर से क्रेन उतरता है। जानवर की तरह क्रेन के जवडे क़ैदी को दबोचकर जेल के अंदर उतार देते हैं। दुर्गा-पूजा की अष्टमी-पूजा में मस्त कलकत्ता ! गोली—कालीगाड़ी—गोली—भागने की कोशिश—गोली—हावलू दत्त की फ़ाइल बंद। एक पुलिस-पहरे से घिरी शव-यात्रा—पीछे क्रुद्ध, संकल्प से कठोर चेहरे वाले शवयात्री चल रहे हैं, तरुण युवा चेहरे। व्रती की वातें सबसे करके कैसे सहज हो जाये ? कैसे अपने शोक को रोज़मर्रा की आम घटना जैसी बना ले ?

सफ़ेद शाल को कंधों पर डाल लिया। चप्पल पहनी। पानी पिया। इतने में दरवाज़े पर दस्तक हुई; विनी ने झाँका।

ठीक तुली और नीपा की तरह बाल बाँधे हैं विनी ने। एक ही तरह की साड़ी। इस समय ये लोग औरों की तरह दीखना चाहती हैं, अपनी तरह नहीं—इसी को फ़ैशन कहते हैं।

'माँ, हो गया ?'

'हाँ, सुमन क्या कर रहा है ?'

'आया के पास है, अब सोयेगा।'
'चलो, नीचे चलो।'

सुजाता ने बत्ती बुझा दी और कमरे से बाहर आ गयी। अंदर से मन कह रहा है : 'नहीं, नहीं!' लेकिन सुजाता सीढ़ियाँ उतरने लगी; जो अच्छा नहीं लगता, वही करते चलने का नाम है कर्तव्य। कर्तव्य करती रही हमेशा, क्या इसे लेकर सुजाता के मन में बहुत गर्व था ? एक बार नीपा की लड़की के जन्म-दिन पर जाने की बात पर व्रती ने कहा था : 'आँखों के डॉक्टर के पास जाना अगर ज्यादा ज़रूरी है तो वहीं जाना चाहिए।'

'नीपा को बुरा लगेगा!'

'कुछ बुरा नहीं लगेगा।'

सुजाता ने कुछ नहीं कहा था।

'दीदी को बुरा लगेगा, यह रस्म-रिवाज की बात है। हमारे किसी काम पर दीदी का दुःख और सुख निर्भर नहीं, यह तो तुम जानती ही हो। फिर क्यों आँखें दिखाने नहीं जाओगी ?'

व्रती को पता था, सब पता था। जानता था, इसीलिए इतनी आसानी से सबको बरबाद कर गया। उस दिन आख़िरकार बाहर चला गया था व्रती, फिर देर बाद लौटकर सुजाता से कहा था : 'चलो, आँखों के डॉक्टर के पास।'

'तू जायेगा ?'

'हाँ, चलो न!'

आँखों में ऐट्रोपीन डालकर सुजाता अकेले आयेगी। उसको तकलीफ़ होगी, इसीलिए व्रती उसको डॉक्टर के पास लेकर गया था। फिर सुजाता को नीपा के घर के सामने उतार दिया था।

'अंदर नहीं आयेगा ?'

व्रती हँसा था। कुछ नहीं बोला था। उस दिन उसने धोती और शर्ट पहन

रखी थी। वैसे तो पैंट ही पहना करता था, लेकिन धोती पहनना उसे बहुत अच्छा लगता था। जब व्रती बदलता जा रहा था, उन दिनों कुछ-कुछ बातें सिर्फ़ अकेले उसी को याद रहती थीं—जैसे सुजाता के आँखों की तकलीफ़ वाली बात। व्रती के मरने के बाद, सुबह-सुबह जो सुजाता काँटापुकूर गयी, लौटने में कितनी देर हो गयी थी। उसने सोचा, क़ायदे से व्रती की मृत देह पुलिस उसको देगी ही। लेकिन पता चला : नहीं देगी, कभी भी नहीं देगी। यह सुनकर भी वह हैरान नहीं हुई थी। हैरान होने की ताक़त ही कहाँ थी? वह लौट आयी थी; फिर खबर पाकर फिर चली गयी थी। दिव्यनाथ की मिन्नतों के और काफ़ी दौड़-धूप के बाद सभी का पोस्टमार्टम जल्दी हो गया था। मुरदाघर में लाशों को फ़ॉर्मलीन से पोंछकर जल्दी-जल्दी छुरा चलाकर डॉक्टर अपना काम खत्म कर देता था। ऐसा न करने से काम नहीं चलता! उन दिनों कितनी-कितनी पुलिस-वैन तो काँटापुकुर आती-जाती थीं—कोई हिसाब है?

शाम से ही श्मशान में जाकर बैठे रहना है। सुजाता दोपहर को घर लौटी। जब लौटी तो चुप्पी से घुटते हुए घर में किसी के कुछ भी करने से पहले ठीक समु की माँ की तरह हेम फूट-फूटकर रो उठी थी; ज़मीन पर सिर पटकती हुई विलाप कर रही थी : 'ठीक सात दिन का बच्चा तुमने मेरी गोद में डाल दिया था, माँजी! तुम तो खुद बचने वाली नहीं थीं, आज तुम उसे कहाँ छोड़ आयीं रे? अब कौन मुझे सब-कुछ भुलाकर दवाई ला देगा रे, कौन कहेगा सड़क पर राशन लेकर पैदल क्यों जाती हो, रिक्शे से नहीं जा सकतीं? कौन मुझे रिक्शे पर चढ़ा देगा रे?'

उस रात सब-कुछ खत्म हो जाने के बाद कौन सुजाता का सिर अपनी गोद में लेकर बैठा था? हेम ही तो थी—सिर्फ़ हेम। व्रती हेम की कितनी देखरेख करता था, लेकिन फिर भी दिव्यनाथ कहते थे : 'अनफ़ीलिंग सन्।[1]'

आज सुजाता को कहने की बड़ी इच्छा हुई कि व्रती, मुझसे नीचे उतरा नहीं जा रहा। तू जो कहता था कि सबसे मुश्किल काम है अपनी तरह होना।

---

1. भावहीन बेटा।

आज अगर मैं अपनी तरह होकर अपनी मरजी से चल पाती तो !

लेकिन हर समय अगर अपनी इच्छा से चल पाती तो व्रती आता ही नहीं इस दुनिया में। गोरा, मुलायम रेशम जैसे वाल—जो वाल उसके मुँडन में भी नहीं उतारे गये, न जनेऊ में। हमेशा सुजाता का हाथ थामकर सड़क पार करने वाला व्रती।

सामने ड्राइंग रूम है; लोगों की वातें, हँसी-ठहाके ! यह दुनियां क्या सिर्फ़ मरे हुओं की है—लाशों की ? लाशें—जो खाती हैं, झगड़ती हैं, लोभ और लालसा से पगला जाती हैं ?

जो इसलिए श्रद्धेय नहीं वनते जिससे व्रती जैसे उनका आदर न कर सकें ! जो इसलिए प्यार नहीं करते जिससे व्रती जैसे उन्हें प्यार न कर पायें !

व्रती श्रद्धा करना चाहता है; प्यार करना चाहता है; प्यार पाना चाहता है।

अभी भी चाहता है, क्योंकि अभी भी कहीं शान्ति नहीं है। अशान्त, क्षुब्ध, पीड़ित, धर्महीन, विद्रोही समय ! सुजाता परदा हटाकर कमरे में गयी।

मिसेज़ कपाड़िया अपने गुरु की वातें कर रही थीं। थोड़ी दूर पर नीपा हाथ में स्कॉच का गिलास लिये कभी इसके, कभी उसके पीछे मुँह छिपाये खिलखिला रही थी। उसका फुफेरा देवर काँटे में कवाव का टुकड़ा दवाये उसके पीछे-पीछे घूम रहा है—नीपा को यह कवाव का टुकड़ा वह खिला के ही रहेगा !

टोनी की वहन नरगिस जोगिया नाइलॉन ऊन की स्किवी और वेल-वॉटम पहने थोड़ा-थोड़ा नाच रही है, और इधर-उधर गरदन घुमाकर कुछ लोगों से बात कर रही है। नरगिस गुरु की भक्त, सेविका है ! वह भारत में स्वामीजी के धर्म का प्रचार करेगी। उसके एक हाथ में है लाइम कॉर्डियल का गिलास। वहुत ज्यादा पीने के कारण मद्योन्माद की मरीज़ होकर अस्पताल में ही रहती है। कभी-कभार किसी ख़ास मौक़े पर वाहर आती है, लेकिन जोगिया कपड़े पहनना नहीं भूलती !

विनी नहीं दीख रही। तुर्ली, नीपा का पति अमित और टोनी अपने दोस्तों के साथ वात करते-करते ठहाका मारकर हँस पड़े। फिर नीपा ने अपना गाल बढ़ाया—टोनी ने उसे चूमा, किसी ने फ़ोटो खींची।

मिसेज़ कपाड़िया के हाथ में स्कॉच भरा-गिलास था। सुजाता और दूसरे लोग उनकी बातें सुन रहे हैं। सुजाता के चेहरे पर हलकी मुसकान है; दिमाग़ काम नहीं कर रहा; शरीर थककर चूर-चूर हो चुका है।

'जब हम सोआमीजी को देका, तुम बिसोआस नहीं करेगा—समथिंग इन मी फ़ायर[1] की माफ़िक जल उठा। तब्भी हम देका सोआमीजी का सिर के पीछू—'हैलो'[2]—बिलकुल वत्ती के माफ़िक जल रहा। रोशनी ग्र्यू ब्राइट एंड ब्राइट जैसे ए थाउज़ेंड सन्स[3]...।'

ब्रती जैसा एक और। कुश। नमदे की नलियों से घिरे निःशब्द कमरे में कुश को उन लोगों ने पट्टों से बाँधकर डाल रखा था। उसकी दोनों आँखों के आगे हज़ार-हज़ार पॉवर की दो बत्तियाँ जल रही थीं। कुश की दसों उंगलियों से नाखून उखाड़ लिये गये थे। शरीर की प्रत्येक नस के केन्द्र में सुई चुभोयी जाती थी और निकाली जाती थी। अड़तालीस घंटे, वहत्तर घंटे—फिर उसको कहा गया था : 'यू आर फ्री।'[4] उसे निकालकर घर पर लाया गया था, फिर घर के सामने उतारकर गोली मार दी गयी थी। उसकी आँखों की पुतलियाँ गल चुकी थीं।

लेकिन हज़ार सूर्यों की रोशनी के सामने रहकर भी मिसेज़ कपाड़िया की दृष्टि नहीं खोयी, बल्कि अन्तर्दृष्टि खुल गयी !

'द सोआमी वाज़ फ़्लाइंग हिज़ ओन प्लेन; ही जस्ट लुक्ड ऐट मी, और

---

1. मुझ में कुछ आग की तरह जल उठा।
2. प्रभा-मंडल।
3. रोशनी हजारों सूर्यों की तरह बढ़ती गयी।
4. अब तुम आजाद हो।

कहे, आओ, हमारे पास आओ। मीट मी ऐट माइऐमी। अच्छा, हम माइऐमी जा रहे, यह उन्हें कैसे मालूम चला, डियर ? कहे, यू आर द गर्ल इन द बुक यू आर कैरीइंग। कौन-सी किताब, जानती हो डियर ? 'ब्लैक गर्ल इन सर्च ऑफ़ गॉड'। मैं ब्लैक थी, डियर; मेरा 'सोल' ब्लैक था। आइ फ़ाउंड माइ गॉड ऐंड ऑल वाज़ लाइट।[1] इन बोथ सेंस—रोशनी और हलकापन।'

नंदिनी के अन्दर का कुछ मर गया था। मर जाने पर आदमी भारी हो जाता है। व्रती का हाथ कितना भारी था ! मर जाने पर शायद अनुभूतियाँ भी शव की तरह भारी हो जाती हैं। उन मरी हुई अनुभूतियों का बोझ ढोते चलने के कारण ही क्या नंदिनी घिसट-घिसटकर चलती है ? क्या अब वह कभी भी स्वाभाविक नहीं होगी ? पत्नी नहीं बनेगी ? माँ नहीं बनेगी ? रास्ते की रोशनी से लेकर, आदमी से, इस धरती के एक-एक धूल-कण से प्यार किया था जिसने—वह कभी माँ नहीं बनेगी ? जो संतान को सह नहीं पातीं, एक के बाद एक पुरुष बदलती हैं, शराब के बाद हशीश का सहारा लेती हैं, उद्देश्यहीन होकर मारी-मारी फिरती हैं, वे ही स्नेहहीन, प्रेमहीन जीवन में शिशुओं को लायेंगी ! 'व्हॅट ए वेस्टेज !'

'तभी से सोआमी जी मेरे गुरु हैं। नॉट ओनली माइन, सारी दुनिया के लोग एक दिन सोआमी जी के डिसाइपल हो जायेंगे। लाइक विवेकानन्द, अमेरिका हैज़ डिस्कवर्ड हिम। नाउ इंडिया विल नो हिम[2]।'

जीसू मित्रा मुँह बाये मिसेज़ कपाड़िया की बातें सुन रहे थे। उन्होंने

1. स्वामी अपना हवाई जहाज खुद उड़ा रहे थे। उन्होंने एक बार मेरी ओर ताका और बोले—मुझसे माइऐमी में मिलना। तुम्ही वह लड़की हो जो उस किताब में हो जो तुम्हारे हाथ में है—काली लड़की, परमात्मा की तलाश में। मैं काली थी न, मेरी आत्मा भी कलुषित थी। मैं अपने परमात्मा तक पहुँच गयी और सब-कुछ प्रकाशमय हो गया।

2. केवल मेरे ही नहीं—सभी उनके भक्त और शिष्य हो जायेंगे। विवेकानन्द की तरह, अमेरिका ने उन्हें पहचान लिया है। अब भारत भी उनसे परिचित हो जायेगा'।

सुजाता से कहा : 'इनसे मुझे मिलवाइये। जस्ट डू। आइ ऐम डाइंग टु नो हर। प्लीज़ डू!'[1]

'मिसेज़ कपाड़िया, जीसू मित्रा—हमारे मित्र।'

'सो प्लीज़्ड...।'

मौली मित्रा ने फुसफुसाकर सुजाता से कहा : 'समझ रही हैं कि तुम्हें अँगरेज़ी नहीं आती, तभी देशी भाषा में वोल रहीं हैं। हाउ फ़नी! क्या पहनकर आयी है, देखा? इनसफ़रेब्ल विच्।[2] हीरे दिखा रही है मुझे!'

मिसेज़ कपाड़िया ने 'हीरा' शब्द सुना। हँसी से चमकती आँखों से मौली की तरफ़ देखा। कहा : 'डायमंड्स पहनना ही पड़ेगा। सोआमी जी कहते हैं—हीरा है 'सोल' का 'सिंवल'। प्युरिटी।'[3]

'हाउ नाइस!'

'लेकिन तुम्हें मैंने माफ़ नहीं किया, डियर।'

'व्हाई?'

'डॉग शो में तुमने मेरे गोल्डन रिट्रीवर को प्राइज़ नहीं लेने दिया!'

'मैंने नहीं, रोवर ने।'

'येस, मुझे इतना ग़ुस्सा चढ़ा। लेकिन व्हेन आई साँ यूअर डॉग!' फिर, सुजाता की तरफ़ मुड़कर कहा, 'तुम विसोआस नहीं करोगी डियर, समथिंग इन मी वेन्ट मैड विद एन्वी।'[4]

जीसू मित्रा ने कहा, 'सोआमी की वातें वताइये।'

'वे गॉड हैं। ऑलमाइटी हैं। ही वान्ट्स इंडिया टु हैव दिस पॉवर्टी—इसलिए लोगों को इतनी सफ़रिंग है। व्हेन ही विल्स, सव लोग रिच् हो जायेंगे।'[5]

---

1. कृपया मिलवा दीजिये। इन्हें जानने के लिए मैं बेचैन हो रहा हूँ। मेहरवानी कीजिये।
2. असह्य कुतिया!
3. हीरे हैं आत्मा के प्रतीक! एकदम निर्मल!
4. जवकि मैंने आप के कुत्ते को देखा, मेरे अन्दर ईर्ष्यातिरेक से कुछ पगला गया।
5. वे परमात्मा हैं। उन्हीं की इच्छा है कि भारत इसी तरह ग़रीब रहे। तभी लोगों को इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है। जब उनकी इच्छा होगी, सभी अमीर हो जायेंगे।

'सच ?'

'ज़रूर। जब टोनी और तुली की शादी की बात बतायी। ही वेन्ट इन टु धयान। धयान के बाद कहा, लड़की वेरी-वेरी अनहैप्पी है। उन लोगों के घर पर एक ईविल छाया है।'[1]

'कहा ऐसा ?'

'ज़रूर! कहा कि जब टोनी और तुली स्टेट्स जायेंगे तो वे उनको कुछ फूल देंगे जिन्हें मकान के चारों तरफ़ गाड़ देना होगा।'

मौली मित्रा ने अचानक सुजाता से पूछा : 'तुम कैसे धर्म का परिवर्तन करोगी, सुजाता ? तुम्हारे तो पहले ही गुरु हैं न ?'

'धर्म-परिवर्तन ?'

'क्यों, मिस्टर चैटर्जी ने कहा कि होल फ़ैमिली सोआमीजी से दीक्षा लेकर कन्वर्ट होगी।'

'मुझे तो कुछ पता नहीं।'

'एक गुरु के रहते दूसरे गुरु की दीक्षा ले सकते हैं ?'

'मेरे कोई गुरु नहीं हैं, मौली।'

'क्यों, रनू और व्रती एक बार अपना रिज़ल्ट जानने नहीं गये थे, जब दोनों स्कूल में पढ़ते थे ?'

'वह सासजी के पुरोहित थे। मेरी सास उनसे कुंडली बनवाती थीं।'

लक्ष्मीश्वर मिश्रा। व्रती की कुंडली भी बनायी थी। सुजाता ने व्रती की कुंडली क्या बार-बार नहीं देखी थी ? दीर्घायु, अवध्य, व्याधि-भय-हीन, आघात-शंका-हीन ! सुजाता ने कुंडली फाड़कर फेंक दी थी।

मौली मित्रा ने मिसेज़ कपाड़िया से कहा : 'यू नो हर यंगर सन व्रती...।'[2]

सुजाता ने कहा : 'मिसेज़ कपाड़िया, मैं अभी आयी।'

---

1. तो वे ध्यान-मग्न हुए। फिर कहा कि लड़की बहुत ही दुखी है। उस घर पर एक शैतानी छाया पड़ी हुई है।
2. आपको पता है न कि इनका छोटा लड़का व्रती...।

व्हिस्की के तीन भरे-पूरे गिलास गटकने के बाद मिसेज़ कपाड़िया का दिमाग़ काफ़ी तरल हो गया था। उन्होंने आँखों पर रूमाल रखा।

'आइ नो। ओ डियर, हाउ यू मस्ट बी सफ़रिंग। सोआमी ने क्या कहा, सुनो डियर।'

'ज़रूर,' सुजाता उठकर चली गयी थी।

जीसू मित्रा ने कहा : 'आज ही तो उसकी डैथ ऐनिवर्सरी है।'

'सच ?'

मौली मित्रा ने कहा : 'दैट बॉय व्रती ! आइ नेवर ट्रस्टिड हिम। उस दिन घर से गया तो क्या कहकर गया, आपको पता है ? कहा था कि रनू के पास रहूँगा रात को। लेकिन फ़र्स्ट ईयर के बाद से रनू के साथ उसका कोई कॉन्टैक्ट ही नहीं था। हुं, रनू के पास रहूँगा ! ऐज़ इफ़ ही कुड बी रनूज़ फ्रेन्ड ! दूसरे दिन अख़बार में कुछ नहीं निकला। मतलब व्रती का नाम। जीसू वेन्ट टु द क्लब। व्हॅट ए ब्लेसिंग—अवर एरिया वाज़ फ्री। क्लब आ-जा सकते थे, नहीं तो जिन्दा रहना मुश्किल हो जाता। मैं तो अखबार खोलती तक नहीं थी, और न ही घर में किसी को पढ़ने देती थी। क्या हॉरिफ़ाइंग खबरें छपती थीं।[1] तो जीसू क्लब से जल्दी लौट आया और उसने कहा—पता है, चैटर्जी का लड़का मारा गया है !'

'ओह, हाउ अन्नर्विंग फ़ॉर यू !'[2]

'फिर, मेरे बड़े भैया, हाँ, डिप्टी-कमिश्नर, उन्होंने फ़ोन किया कि व्रती हमारे घर आया था या नहीं। सुनते ही जीसू ने रनू को बॉम्बे के लिए रवाना कर दिया।'

'यू डिड राइट।'[3]

'नैचुरली, हम लोग आये कंडोलेंस जताने। तब चैटर्जी हैड ए बैड टाइम। हुश-अप करने के लिए बेचारे को कितनी दौड़-धूप करनी पड़ी

---

1. जीसू क्लब गया। कितना शुक्र था—हमारे क्षेत्र में ये काण्ड नहीं होते थे—कैसी-कैसी भयानक ख़बरें छपती थीं !
2. तुम्हें तो कैसा आघात पहुँचा होगा !
3. ठीक ही किया आपने।

थी। हमें इतनी तकलीफ़ होती थी कि क्या बतायें? आप ज़रूर जानती होंगी, सुजाता इज़ थॅरोली अनफ़ीलिंग वाइफ़। शी स्पायल्ट हर सन्। नहीं तो ऐसी फ़ैमिली का लड़का कभी...।'

जीसू मित्रा ने कहा, 'ओफ़, कैसे दिन वीते हैं तव। आप तव कहाँ थीं?'

'स्टेट्स में।'

'टोनी?'

'यहीं। ऐज़ मौली सेड—पार्क स्ट्रीट, कैमक स्ट्रीट, फ़्यू एरियाज़ वर फ्री। टोनी का दोस्त सरोजपाल ही तो तव ऑपरेशन्स का इंचार्ज था। ब्रिलियंट वॉय। क्या करेज है! जिस तरह इन लोगों की धर-पकड़ की उसने!'

'सच?'

मौली मित्रा ने कहा: 'क्या फ़ूलिशनेस है! समाज के ज्युएल्स को तुम लोगों ने मार डाला। क्या फ़ायदा हुआ? तुम लोग भी मरे। वीच में से ख़ामख़्वाह ऑनेस्ट ट्रेडर्स डर के मारे यहाँ से कैपिटल लेकर भाग गये।'

'टेल्लिग मी! स्टेट्स से आइ फ़्ल्यू टु वॉम्वे। वम्वई से मुझे कोई कलकत्ता आने ही न दे! उस समय कलकत्ता में अमीरों को देखते ही मार डालते थे! मैंने क्या किया—पता है?'

'क्या किया?'

मिसेज़ कपाड़िया का चेहरा गर्व से चमकने लगा। उन्होंने कहा: 'सूती साड़ी पहनकर सेकंड क्लास से मैं कलकत्ता चली आयी। कहा: 'माइ हस्वैंड ऐंड माइ सन नीड मी। सोआमी की व्लेसिंग है—नो फ़ोर्स इन द वर्ल्ड कैन किल मी।'

जीसू मित्रा ने इसके जवाव में कहा: 'लेकिन सुजाता लवली दीख रही है। सफ़ेद! ग्रीफ़, कितना अच्छा!'

मौली मित्रा ने कहा: 'दैट्स ए स्टंट। सुजाता को पता है, ईवनिंग में सव रंगीन कपड़े पहनेंगे—ऐज़ ए कंट्रास्ट—सफ़ेद पहना है।'

मिसेज़ कपाड़िया ने कहा : 'क्या मेक-अप यूज़ किया है डियर, बताना ज़रा, बड़ा अनयूज़ुअल है।"

'मेक-अप ? सुजाता ने ? माइ डियर मिसेज़ कपाड़िया, शी नेवर डज़।'

'वट व्हाई ? शी इज़ ब्यूटीफ़ुल।'

टोनी ने कहा : 'लेट मी इंट्रोड्यूस माइ ब्यूटीफ़ुल मदर-इन-ला। माँ, यह जर्नलिस्ट हैं। आपको देखने के लिए मरी जा रही हैं।' टोनी बंगाल के तरीक़े से बँगला बोला। कलकत्ता का लड़का है। बँगला अच्छी तरह जानता है।

जर्नलिस्ट ने कहा : 'बढ़िया पार्टी है। ब्यूटीफ़ुल साड़ी है आपकी लड़की की। मिस्टर चैटर्जी क्या बढ़िया संस्कृत बोलते हैं! टिपिकल बंगाली घर है आप लोगों का।'

'आपने कुछ खाया ?'

"बहुत। अच्छा, क्या मैं आपका इन्टरव्यू ले सकती हूँ।'

'मेरा ?'

'मैं बॉम्बे की एक विमेंज़ मैगज़ीन में लिखती हूँ। आप एक माँ हैं, पत्नी हैं और बैंक में ऑफ़िसर। होम और कैरियर एक साथ चलाया जा सकता है...।'

'मैं ऑफ़िसर नहीं हूँ।'

'वट टोनी सेड...।'

'क्लर्की से शुरू किया था। बीस साल में सेक्शन-इंचार्ज हुई हूँ।'

'हाउ नाइस !'

'इसीलिए...।'

'अच्छा, आपका बेटा तो मार दिया गया था न ? फ्रॉम द ऐंगल ऑफ़ ए सॉरोइंग मदर...।'

'नहीं, माफ़ कीजिये।'

सुजाता उसी वक़्त वहाँ से हट गयी। औरतों की मैगज़ीन में सुजाता की तस्वीर—'ए बिरीव्ड मदर स्पीक्स !' ये लोग किसी तरह भी व्रती को

उसके साथ नहीं रहने देंगे, लेकिन फिर भी सारा दिन आज उसी के साथ ही तो थी। 'सी, गाइ सन वाज़...। वॉम्वे की टॉप महिलाएँ, रेस के घोड़े के मालिक, विज़नेसमेन की पत्नियाँ, फ़िल्म स्टार—सब व्रती और सुजाता की बातें पढ़ रहे होंगे।

सुजाता अमित के पास गयी।

'अमित, कुछ खाय' ?'

'हाँ, माँ !'

'तुम्हारे दोस्तों ने खाया ?'

'सबने खाया।'

व्हिस्की है, लेकिन फिर भी उनका दामाद शराव के नशे में धुत्त नहीं हुआ, देखकर सुजाता हैरान हुई। अमित को चुनकर लाये थे दिव्यनाथ। नीपा अपने सितार के मास्टर के साथ भाग गयी थी। उसे पकड़ ले आये और महीने-भर के अन्दर शादी करा दी। वहुत पैसे खर्च किये थे। कमज़ोर मन का, डरपोक, वड़ी नौकरी वाला, अमीर वाप का लाड़ला वेटा अमित, नीपा का पति है।

अमित के लिए सुजाता को दुःख होता है। पहले वह नहीं पीता था। अव नशे में धुत्त होने के लिए ही पीता है। उसी के घर में उसी के फुफेरे भाई के साथ नीपा ने जव से रहना शुरू किया तभी से उसने पीना शुरू किया था।

सुजाता को समझ में नहीं आता कि क्यों अमित अपने फुफेरे भाई को कुछ नहीं कहता। इस परिस्थिति में या तो वीवी से वातचीत कर लेनी चाहिए, और अगर वात हाथ से वाहर चली गयी हो तो फुफेरे भाई से ही वात कर लेनी चाहिए। भाई को घर से निकाल देना चाहिए ! वीवी को घर से चले जाने को कहना चाहिए ! क़ानून है; अदालत है; कुछ-न-कुछ वन्दोवस्त तो करना ही चाहिए।

पर अमित यह सव-कुछ भी नहीं करता—पीता है सिर्फ़। दिव्यनाथ रीति-रिवाज मानते हैं, इसलिए जवाँई-छठ के रोज़ दोनों यहाँ आते हैं, साथ-साथ। साल में एक वार अमित के गुरु के पास दोनों जाते हैं। अमित

तिमंज़िले पर सोता है। दूसरी मंज़िल में एक कमरे में नीपा की लड़की और उसकी आया रहती हैं; उसी मंज़िल में बलाई और नीपा के बैडरूम हैं—पास-पास।

ये सब जैसे कीड़ों से खाया, व्याधि-ग्रस्त, सड़ा-गला कैंसर है। मरे हुए रिश्तों को घसीटते हुए, कुछ लाशें जीने का बहाना कर रही हैं। सुजाता को लगा—अमित, नीपा, बलाई के पास खड़े होने पर भी शायद इनकी देह से सड़ने की दुर्गन्ध आने लगेगी। ये भ्रूणावस्था से ही दूषित, व्याधिग्रस्त हैं! जिस समाज को व्रती जैसों ने उद्ध्वस्त कर देना चाहा था वही समाज हज़ारों भूखों का अन्न छीनकर इन्हीं को यत्न से पाल-पोस रहा है। उस समाज में जीवन के अधिकारी होते हैं मरे हुए लोग, सचमुच के जीवन्त लोग नहीं। लेकिन बलाई क्या कह रहा है?

'अब बच्चुओं की हालत क्या है? सब तो महल्ला छोड़-छोड़कर भाग गये हैं। अरे बाबा, बरानगर, बरानगर कहकर टसुए बहा-बहाकर धीमान ने कविताएँ नहीं लिखीं? रोने से क्या होगा? सीधी-सी बात है, बरानगर में मोर दैन हंड्रैड का क़ीमा बना डाला गया था, इसीलिए न आज वहाँ शान्ति है? जब तक काटकर मारा नहीं था तब तक कितना टेंशन था!'

धीमान कौन है? धीमानराय! जिसकी बात नंदिनी ने बतायी। सुजाता ने देखा, शाल की मैक्सी पहने एक गोरी-चिट्टी लड़की ने हाथ में गिलास लिये बलाई के कन्धों पर हाथ रखा और कहा: 'क्या बढ़िया लिख रहे हैं न ये लोग?'

बलाई ने कहा: 'बीस हज़ार लड़के जेल में हैं, इसका रोना रो रहा था धीमान। क्या हमें बेवकूफ़ समझता है? जब ऐक्शन, काउंटर-ऐक्शन चल रहा था—तब सब लोग सरकार की झाड़ खाकर बँगला-देश, बँगला-देश कहकर, रो-रोकर अखबारों में लिख रहे थे। अब सब-कुछ अंडर कंट्रोल है—नाउ ही फ़ील्स ही इज़ सेफ़ इनफ़ टु राइट।'

'हटिये! क्या कह रहे हैं? उस दिन इनकी एक कविता पढ़कर मुझे तो रोना ही आ गया था। आइये, आप ही की कविता की बात हो रही

थी। व्हेन डू यू राइट? इतना बिज़ी रहते हैं। रियली यू आर ट्रूली कमिटिड टु द कॉज़।'

धीमान राय चालीस पार कर गये हैं। चपटा चेहरा, देखने में कुरूप। पक्के अभिनेता की तरह चेहरे पर संकोच का भाव ले आये। मोटी कर्कश आवाज़ में बोले: 'किसी और विषय पर कवि कैसे लिख सकता है?'

'रियली, जब आपकी वह वाली कविता पढ़ी, अनूप दत्त, यू नो हिम, अनूप ने कहा: ही फ़ील्स।'

'देखिये, आज सब लोग उन्हीं की बात सोच रहे हैं।' धीमानराय ने बड़ी निपुणता से मक्खन के टुकड़े पर दाँत गड़ाये। फिर व्हिस्की की चुस्की ली। सुजाता ने सुना है—कॉफ़ी और मक्खन खाने से नशा नहीं होता। धीमान को देखकर समझ गयी कि नशे के लिए वह नहीं पी रहा।

'जानती हूँ,' अचानक नीपा बोल पड़ी। बहुत व्हिस्की पीली है नीपा ने। उसके चेहरे पर रूखी उद्दंडता है।

'अच्छा! जानती हो?' अमित ने व्यंग्य से कहा।

'श्योर! एक वाश्ड-आउट कवि, दूसरे के अनुभवों पर लिखता है। उसकी कविता में कितना एक्सपीरियंस होगा, यह सबको पता है। मेरा भाई मरा था। तब तुम्हारे सिम्पैथेटिक कवि क्या कर रहे थे? हाइडिंग बिहाइंड हूज़ स्कर्टस? बलाई ने क्या मुझे नहीं बतलाया सब-कुछ?'

'व्रती को लेकर तो तुम ही मुसीबत में पड़ गयी थीं तब। किसी को मुँह नहीं दिखाती थीं!'

'किसने कहा?'

'मैंने।'

'तुम्हीं ने तो मुझे बार-बार कहकर आगाह किया था।'

'नॉट मी!'

'झूठा कहीं का!'

'टेक दैट बैक।'

'आई वोन्ट।'

'मैं खिदिरपुर के गाँगुली परिवार का लड़का हूँ, तुम्हारी तरह की

टके की वेश्या के लिए...।'

'अमित !' सुजाता ने ही दबी आवाज़ में धमकाया।

कुछ तनावपूर्ण क्षण, विस्फोटक—रस्सी जल रही है, जल रही है, बारूद छूयेगी अभी, छूयेगी अभी—लेकिन नहीं छुआ। क्योंकि नीपा अचानक चहककर हँस उठी।

'तुम भी हद करती हो माँ, हम तो ऐसी लड़ाई का बड़ा मज़ा लेते हैं।'

'अपने घर में लिया करो।'

सुजाता वहाँ से हट गयी। पार्टी जमने लगी है। टेम्पो बढ़ रहा है। क़रीब-क़रीब सब लोग नशे में हैं। टोनी की बहन नरगिस पीतल के दो ऐश-ट्रे बजाकर 'सोआमी', 'सोआमी' कहकर नाच रही है। जीसू मित्रा उकड़ूं बैठे थोड़ा-थोड़ा झूमते हुए ताली बजा रहे हैं।

अमित ने चिढ़कर कहा, 'तुम्हारी माँ न, एक 'किल-जॉय' है।' फिर उसने तय किया कि अब वह नशे में धुत्त होगा। नीट व्हिस्की डाली और गटक गया।

'नीपा, चलो भागते हैं,' बलाई ने कहा।

'चलो।'

'लेट्स गो टु शरत्स। आज फ़िल्म सेशन है। उसके घर पेरिस से लायी गयी तस्वीरें हैं।' बलाई ने ज़बान को मुँह के अन्दर-ही-अन्दर घुमाकर एक आवाज़ निकाली। आवाज़ सुनकर अंदाज़ा लगाया जा सकता था, कैसी तस्वीरें होंगी, ज़रूर उत्तेजक !

'चलो।' दोनों बाहर चले गये।

धीमान राय ने अमित से कहा, 'आप भी खूब हैं !'

'क्यों ?'

'बलाई के साथ आपकी बीवी फ़िल्म देखने चली गयी।'

'आपको इससे मतलब ?'

'बलाई, इस पट्ठे को कैलेंडर भी मिल जाये तो...।'

'अरे भाई, आप शराब की ख़ुशबू में बड़े-बड़े लोगों को कल्टिवेट करते हैं, इसीलिए यहाँ आये हैं। फ़्री शराब मिल रही है, पीते रहिये, और मामलों में सिर क्यों खपा रहे हैं ?'

'बलाई के साथ...।'

अमित खिक्-खिक् करके चालाक सियार की तरह हँसा। कहने लगा : 'आप मुझे बलाई के बारे में बता रहे हैं ? वह मेरा फुफेरा भाई है।'

'भाई ?'

'जी महाशय ! महिमा रंजन गाँगुली का पोता हूँ मैं, और दोहता है वह।'

'ओह, यह बात है !'

'फ़ेट को मानते हैं ? नियति को ?'

'कभी नहीं। न नियति को मानता हूँ, न ईश्वर को !'

'क्रैप !'

'क्या कहा ?'

'रबिश ! आपकी तरह के नास्तिक, सुबह-शाम मेरे दफ़्तर में चक्कर लगाते हैं।'

'आप नशे में हैं।'

'और आप नशे में नहीं हैं। हज़रत, फ़ेट पर विश्वास रखिये; फ़ेट है।'

'कैसे ?'

'फ़ेट के अलावा और क्या कहा जा सकता है ? बलाई ने फ़ैमिली की एक भी लड़की को छोड़ा है जो मेरी बीवी को छोड़ेगा ? अरे साहब ! मेरी छोटी बुआ, उसकी छोटी मौसी, उन्हीं से उसकी बदचलनी शुरू हुई थी। नीपा को वह आसानी से छोड़ देता ? लेकिन हाँ, बलाई ऊँचे ख़ानदान का है—फ़ैमिली छोड़कर बाहर बदफ़ेली करने नहीं जाता।'

'बलाई के साथ बीवी को...।'

'बलाई मेरा भाई भी है, और दोस्त भी। उसके कनेक्शन कहाँ-कहाँ

हैं, पता है ? उसे नाराज़ करने से...?'

'जनाव, आप वहुत ही लिवरल हैं...।'

'ट्रूली लिवरल !'

मिस्टर कपाड़िया ने कहा : 'मैं हूँ असल लिवरल।'

दिव्यनाथ ने कहा : 'जानता हूँ।'

मिस्टर कपाड़िया ने अपने क्रीज़ वाले सूट के काले वटन पर उँगली रखकर कहा : 'मेरी पॉलिसी अगर फ़ॉलो करो तो देश की सव समस्याएँ मिट जायें।'

'कैसे ?'

मिस्टर कपाड़िया शुद्ध वंगला में बोलने लगे : 'देश की समस्याएँ क्या हैं, वताइये ? इंटिग्रेशन नहीं हो रहा है; अनेक धर्म, भाषा, जाति होने के कारण देश में विघटन हो रहा है। फ़ूड कोई समस्या ही नहीं है। फूड-रायट की वात आपने सुनी है कभी ! किसान लोग काफ़ी वेल-ऑफ़ हैं। सव रेडियो ख़रीद रहे हैं। एम्प्लायमेंट ? वहुत लोगों को नौकरी मिल रही है। नेशनल वेल्थ ? सभी के हाथ में पैसे हैं। नहीं तो हाउ कम, सव लोग घर वना रहे हैं, गाड़ी ख़रीद रहे हैं, महँगी चीज़ें खा रहे हैं ?'

'सही है।'

'भाषा की क्या समस्या है ? जो जहाँ पर है वहाँ की भाषा सीखे। मैं यहाँ शराव वेचता हूँ तो वंगला सीखी है।'

'मास्टर रखा है आपने ?'

'रखना ही होगा। टैगोर की भाषा है।'

'सच ?'

'तो भाषा की समस्या इस तरह हल हो गयी। अव धर्म ? धर्म की क्या ज़रूरत है ? वर्न डाउन मन्दिर-मस्जिद—एवरी थिंग। फ़ॉलो सोआमी; सोआमी ज़िन्दा ईश्वर है। उन्हीं को फ़ॉलो करो।'

'क्या वात कही है !'

'हम लोग सोआमीज़ चिल्ड्रन इन इंडिया, दिल्ली, वॉम्बे, कलकत्ता, मद्रास में ऑफ़िस खोल रहे हैं। छः हज़ार लोगों को नौकरी देंगे। प्लेन

और हैलीकॉप्टर खरीद रहे हैं। भारत की हर भाषा में सोआमी का मैसेज छापेंगे। आसमान से लेकर भारत में जगह-जगह उसका मैसेज फैलायेंगे। इन नो टाइम, सब लोग सोआमी को फ़ॉलो करेंगे।'

'ट्रू।'

'धर्म की समस्या भी हल हो गयी। अब जाति की समस्या। लॉ बना दीजिये कि कोई अपने प्रदेश में अपनी जाति और भाषा के लड़के-लड़की के साथ शादी नहीं कर सकेगा। बंगाली मैरीज़ पंजाबी, उड़िया मैरीज़ बिहारी, असमिया मैरीज़ मराठी, बस। सब समस्याएँ हल हो गयीं।'

'टोनी के साथ तुली जैसे...।'

'इसके लिए मैं ग्रेटफ़ुल हूँ।'

'क्या कह रहे हैं साहब ? मैं ग्रेटफ़ुल हूँ, ऐंड प्राउड !'

'मैं भी।'

'ग्रेट मुग़ल ऑफ़ द वाइन ट्रेड, उनके साथ सम्बन्ध !'

'आप भी किसी से कम हैं क्या ?'

'टोनी इज़ ए ग्रेट बॉय।'

'तुली इज़ ए ग्रेट गर्ल।'

'जैकी इज़ ए ग्रेट सन।'

'ज्योति भी।'

'नरगिस इज़ ए ग्रेट गर्ल।'

'नीपा टू...।'

'आप लोगों की फ़ैमिली ग्रेट है।'

'आप लोगों की भी।'

'आप लोगों की पेडिग्री...।'

'आप लोग ज़मींदार हैं।'

'हम कुलीन हैं।'

'कुलीन ? दैट्स ग्रेट।'

'एक दिन आपको अपना फ़ैमिली ट्री दिखलाऊँगा।'

'ज़रूर।'

'तब आप देखेंगे कि...।'

'एक बात है, चैटर्जी...।'
'क्या ?'
'मिसेज़ चैटर्जी आपके छोटे बेटे का शॉक...।'
'नहीं, नहीं, शी इज़ ऑल राइट !'
'आपका लड़का, और इस तरह...!'
'मिसगाइडिड था।'
'ज़रूर, ऐसा ही हुआ होगा ?'
''बैड कम्पनी, बैड फ्रेन्ड्स !'
'मस्ट बी दैट।'
'पता है ? हम बाप-बेटे कितने क्लोज़ थे ?'
'सुना है, तुली से।'
'एकदम बेबीज़ की तरह; हैड नो सीक्रेट फ़ाम ईच अदर।'
'ऐसा ही होना चाहिए।'
'वह गॉड की तरह मेरी रिस्पैक्ट करता था।
'क्यों नहीं करेगा ? सच ए फ़ादर !'
'वही लड़का जब...।'
'ओह !'
'मेरे हार्ट के टुकड़े-टुकड़े हो गये थे।'
'होंगे ही।'
'मुझे ऐसा शॉक लगा है...।'
'दुःख मत कीजिये। सोआमी कहते हैं—डैथ कुछ नहीं है। शरीर आपका भी मर जायेगा। हेवन में आप लोगों को 'सोल' मिलेंगे। तब देखेंगे आप कि आपका लड़का वैसा ही है।'
'अच्छा, मैं उसे देख पाऊँगा ? ऐसा कहा है सोआमीजी ने ?'
'ज़रूर !'
'मैं सोआमी को फ़ॉलो करूँगा—ज़रूर।'
'कीजियेगा—ज़रूर।'

'यह मेरी पत्नी हैं। अजी सुनो, यह कैसी अच्छी-अच्छी बातें कर रहे हैं।

सुनो। सुनो न, इधर आओ।'

'मैंने सुना है, पीछे ही तो बैठी थी।'

'मिसेज चैटर्जी, व्हिस्की ?'

'धन्यवाद, मैं नहीं पीती।'

'आपकी तबीयत ठीक नहीं है क्या ?'

'नहीं,' सुजाता उठकर चली गयी। विनी बुला रही थी।

दर्द की लहर उठ रही है बार-बार। सब-कुछ जैसे डोल रहा है, धुंधला रहा है। फिर स्पष्ट होता जा रहा है। शायद ज्योति ने कोई रिकॉर्ड लगाया है—जैज का उन्मत्त स्वर !

'क्या हुआ, विनी ?'

'माँ, तुली बुला रही है।'

'क्यों ?'

'टोनी के कोई ख़ास दोस्त आये हैं।'

'कहाँ ?'

'बाहर।'

'बाहर क्यों ?'

'गाड़ी से नहीं उतरेंगे।'

'अन्दर आने के लिए कहो।'

'माँ, तुम्हारे पैर लड़खड़ा रहे हैं ?'

'दर्द हो रहा है।'

'तो तुम बैठो।'

'नहीं।'

'मैं उन्हें अन्दर बुला लाती हूँ।'

'नहीं, मैं ही चली जाती हूँ।'

'तुम क्यों जा रही हो ? मैं जाता हूँ।'

'नहीं, तुली शोर मचायेगी।'

'तो चलो।'

'मैं उन्हें नीचे गाड़ी से उतरने को कहती हूँ। तुम मिठाई का पैकेट ले लो। नीचे उतरें तो ठीक, नहीं तो पैकेट दे देंगे।'

'ठीक है।'

सुजाता ने शाल रख दिया और बाहर चली आयी। सर्दी, बेहद ठंडी उत्तर की हवा। अँधेरा बगीचा, घुप्प अँधेरा। अगर वह इस अँधेरे में खो जा सकती तो? लौटकर इस घर में घुसना न पड़े फिर से! सड़क पर गेट के सामने वाली गाड़ी!

कालीगाड़ी। काली वैन। खिड़कियों में जाली, पीछे के दरवाज़ों में जाली। खिड़कियों की जाली से हैलमेट से ढका सिर दीख रहा है। सामने कौन बैठा है? ड्राइवर की पास वाली सीट पर? गाड़ी घरघरा रही है; स्टार्टर बन्द नहीं किया गया है।

सफ़ेद धुली पोशाक। पीतल का बैज; डि० सी०, डि० डि० सरोजपाल! बंगला माँ का बेहद नटखट बेटा, शेर-दिल सरोजपाल! 'सरोजपाल! तुम्हारे लिए काफ़ी नहीं है।' लिखा हुआ एल्यूमीनियम का दरवाज़ा धड़ से गिरता है, अन्दर व्रती का लिटाया हुआ शरीर—निस्पंद, बर्फ़-सा ठंडा। सरोजपाल!

'येस, मेरी भी माँ है।'
'नहीं, आपका लड़का दीघा नहीं गया था।'
'नो, नो, यह सब चीज़ें घर में नहीं रहेंगी।'
'नहीं, फ़ोटो नहीं मिलेगी।'
'बेटे को आप शिक्षा नहीं दे पायीं?'
'आपका बेटा गुंडों के दल से मिला हुआ था।'
'आपके बेटे ने जो कुछ किया, उसको माफ़ नहीं किया जा सकता।'
'आपको चाहिए था कि बेटे के मन की बात भाँप कर, उसे सरेंडर करने के लिए कहना।'

'नहीं, बॉडी नहीं मिलेगी।'

'नहीं, बॉडी नहीं मिलेगी; नहीं, बॉडी नहीं मिलेगी।'

सुजाता ने देखा, सरोजपाल ने देखा। एक हज़ार चौरासीवें की माँ! व्रती चैटर्जी की माँ! इनसे, सुजाता से मुलाक़ात हो जायेगी—इसलिए सरोजपाल आना नहीं चाहता था।

विनी ने आगे बढ़कर कहा, 'नीचे नहीं उतरेंगे?'

'नहीं।'

'एक मिनट के लिए भी नहीं?'

'नहीं, काम है, टोनी और तुली को मेरे गुडविशिज़ दीजियेगा।'

'मिठाई का पैकेट तो लीजिये न कम-से-कम।'

'दीजिये, जल्दी में हूँ। अच्छा नमस्ते।'

स्टार्ट। गाड़ी ज़ोर से घरघरायी और निकल गयी।

अभी भी काम है? अभी भी यूनिफ़ॉर्म पहननी है? कालीगाड़ी, कमीज़ के नीचे स्टील के चेन की शील्ड, चमड़े के केस में बन्द पिस्तौल, पीछे की सीट पर हैलमेट पहने संतरी!

कहाँ है अशान्ति? कहाँ है काम? भवानीपुर—बालीगंज—गड़ियाहाट बेहाला—बारासत—बरानगर—बाग बाज़ार—कहाँ पर है काम?

दुकानों के पल्ले कहाँ बन्द होंगे? घरों के दरवाज़े कहाँ बन्द होंगे, कहाँ सड़क पर से भीत, त्रस्त, राहगीर, साइकिल-सवार, सड़क का कुत्ता, रिक्शे वाला डरकर भागेगा? कहाँ पर सायरन बजेगा? धप्-धप्-धप्-धप्—सड़क पर भारी बूटों की आवाज़ होगी; वैन की घरघराहट, फट्-फट्-फट्—गोली की आवाज़ होगी? कहाँ?

कहाँ? कहाँ फिर से भागेगा व्रती? कहाँ भागेगा? कहाँ नहीं हैं हत्यारे, कहाँ नहीं हैं गोली, पुलिस, वैन और जेल? यह महानगरी, गंगापुत्र-बंगाल में, उत्तर बंगाल में, जंगल, पहाड़, बर्फ़ ढके प्रान्त, राढ़ देश के

कँकरीले-पथरीले बाँध, सुन्दर वन के खारे पोखर, वन, शस्य खेत, कल-कारख़ाने, कोयला-खान, चाय-बागान, कहाँ-कहाँ भागेगा व्रती ? कहाँ खो जायेगा फिर से ? भाग मत व्रती, मेरे पास लौट आ, लौट आ व्रती, मत भाग अब !

आज सारे दिन उसे ढूंढ़-ढूंढ़कर अपने पास पा सकी थी सुजाता। वह इन सब चीज़ों में है, था, फिर से अगर वैन चले, फिर से अगर सायरन की चीख़ से आसमान फट जाये, व्रती, फिर से खो नहीं जायेगा ? घर लौट आ व्रती, ऐसे भागा-भागा न फिर; कोई तुझे भागने नहीं देगा, जहाँ जायेगी वहाँ से तुझे घसीट लायेंगे। मेरे पास आ, व्रती !

'माँ, तुम लड़खड़ा रही हो।'

विनी का हाथ ठेलकर हटा दिया सुजाता ने। दौड़कर लौट आयी, कमरे के दरवाज़े पर ठिठककर खड़ी हो गयी।

डोल रहा है सब-कुछ, सब-कुछ हिल रहा है, घूम रहा है। इन लाशों को जैसे कोई धागे से खींचकर नचा रहा है। लाशें, सड़ी-गंधाती लाशें—सब-की-सब। धीमान—अमित—दिव्यनाथ, मिस्टर कपाड़िया—तुली, टोनी, जीसू मित्रा, मौली मित्रा, मिसेज़ कपाड़िया, और खुद वह ?

धरती की सब कविता, कविता के बिम्ब, लाल गुलाब के गुच्छे, हरी घास, नियाँन की रोशनी, माँ के चेहरे पर फैली हँसी, शिशु का क्रन्दन—हमेशा, अनंत काल तक इन सबका भोग करती रहेंगी ये लाशें ! अपने सड़े-गले-गँधाते अस्तित्व को लिये धरती के हर सौन्दर्य और माधुर्य को हथियाये रहेंगी, क्या इसीलिए व्रती मर गया ? सिर्फ़ इसीलिए ? धरती को, पृथ्वी को इन लोगों के हवाले कर उनके ही हाथों में सौंपने के लिए क्या उसने अपनी जान दे दी ? 'नहीं, कभी नहीं, व्रती ई...ई...!'

सुजाता की लम्बी, दिल दहला देने वाली चीख़, उसका आर्त्त-विलाप। एक विस्फोट की तरह यह प्रश्न फूटकर बिखर गया—कलकत्ता के हर घर में,

शहर की नीवों में धँस गया, आकाश के शून्य में मिल गया, हवा के साथ प्रदेश के कोने-कोने में फैल गया। इतिहास के साक्षी खँडहरों के अँधेरे, इतिहास के परे पुराणों के विश्वास की नीवें काँप गयी। भूला हुआ, न भूला हुआ अतीत, वर्तमान, आगामी काल—सब-कुछ जैसे यह क्रन्दन सुनकर काँप गये। हर सुखी-सुखी दीखने वाले अस्तित्व के सुख तार-तार हो गये।

यह क्रन्दन खोखला नहीं है—इसमें भरी है रक्त की गंध, प्रतिवाद का प्रण, शोक की आतुरता।

फिर सब-कुछ अँधेरा; सुजाता का शरीर लड़खड़ाकर गिर पड़ा। दिव्यनाथ चिल्ला उठे : 'लगता है, ऐपेंडिक्स फट गया !'